श्री सिद्ध किशोरी
चरितामृत-सागर

✻ श्री सीताराम जी ✻

श्री सिद्धकिशोरी चरितामृत–सागर

विषय सूची

विषय पृष्ठ संख्या

प्रथम खण्ड

द्वितीय खण्ड

अनन्त श्री रामजी—अनन्त श्री किशोरी जी (बिहौती भवन, श्री अयोध्या जी)

(१)

श्री:

भगवते श्री रामानन्दाय नम: श्री सीतारामचंद्राभ्यां नमः श्रीमते श्री हनुमते नम:

श्री सिद्धकिशोरीश्यै नमः

श्री गुरुवे नमः

❁ श्री गुरु वन्दना ❁

जे गुरु चरण रेणु सिर धरहीं । ते जनु सकल विभव बस करहीं ॥

जे गुरु पद अम्बुज अनुरागी । ते लोकहु बेदहु बड़भागी ॥

"गुरु बिन भवनिधि तरे न कोई । जो विरंचि शंकर सम होई ॥"

श्री गुरु चरण सरोज रज, निज मन मुकुर सुधारि ।
सिद्ध किशोरी चरित कहुँ, जो दायक फल चारि ॥

श्री गुरुदेव !

आप के श्री चरणों में इस तुच्छ सेवक का कोटिशः प्रणाम है, सादर सप्रेम वन्दना है, साष्टांग दंडवत् है। आप तो मायिक गुणों से निगु ण एवं निराकार होते हुए भी शिष्यों के प्रेमवश सुदिव्य सगुण साकार हो जाते हैं। प्राकृतिक वाणी से अ-निर्वचनीय हैं, फिर भी शिष्य पर-शिष्य आप का गुणगान करते ही हैं।

बलिहारी गुरुदेव की, कियो बहुत उपकार।
महामंत्र हरिनाम दै, छुटा दियो संसार ॥

भगवन्! आप ने अकारण कृपा-दया से इस दीन सेवक को अपने चरण शरण में लिया। प्रभु की सेवा-सुमिरन का मार्ग दिखलाया तथा संत जनों का साथ कर दिया। उन्होंने भी संसारी मोहमाया से छुड़ाकर भगवान की ओर बढ़ाया। गुरुदेव ! आप की अपार कृपा का अनुभव कर मैं तो कृतकृत्य

एवं कृतार्थ हो गया। भगवन ! मैं तो नेत्रों में अश्रु मोतियों की भेंट लेकर अश्रुओं के ही अर्घ से पाद-पद्मों को धो, प्रणाम करता हूँ। मेरी कुपात्रता पर ध्यान न दीजिएगा। पारस लोहे की कुपात्रता पर ध्यान न देकर उसको स्वर्ण बना देना ही अपना स्वाभाविक धर्म समझता है। गुरुदेव ! मैं तो आप की दया का भिखारी हूँ।

बार बार वंदन करूँ, हरि-गुरु संत समान।
बलिहारी गुरुदेव की, दीनो हरि पद दान॥
स्थिर ह्वै मन रमि रहै, मिथिला-अवध ललाम,
यह वर प्रभु मोहिं दीजिये, रटौं सदा सियराम।

इस घोर संसार रूपी समुद्र के एक मात्र कर्णधार ! इस शुष्क जीवन वाटिका में सरसता—विमलता लाने वाले श्री गुरु महाराज ! मेरे हृदय के आराध्य देव !

"करन चहौं निमिकुल गुन गाहा, लघु मति मोर चरित अवगाहा"

हे कृपानाथ ! "मैंने श्री सिद्धकिशोरी जी" की शुभ जीवनी को लिखने का साहस तो कर लिया है। परन्तु लिखने की बुद्धि नहीं, लेखन-शैली भी नहीं जानता, लेखक के नियम क्या २ हैं, इनको भी मैं भूल गया हूँ। इन्हीं कारणों से बड़ी असमंजस में पड़ा हूँ कि अब करूं तो क्या करूं ? भारी कठिनाई दिखाई पड़ रही है। मैं रात दिन इसी उधेड़बुन में हैरान व परेशान हूँ। अब तो केवल एक मात्र आपका ही आसरा और भरोसा है। गुरुदेव ! आपकी शरण हूँ। दयासागर ! इस दास पर दया करना, कृपा करना एवं लाज भी रखना।

आप का चरण-रज पाद-पद्मानुगामी
रामगोपालदास (भइया जी)
(लक्ष्मीनिधि)

श्री इष्ट वन्दना

"सिद्ध किशोरी" बहु उपकार, तुम ने सर्वदा 'भइया' पर किये।
उपहार प्रति उपकार मैं क्या दूँ तुम्हें इसके लिये ॥ १ ॥
है क्या हमारा सृष्टि में, यह सब तुम्हीं से है बनी।
संतत ऋणी हम हैं तुम्हारे, तुम हमारी हो धनी ॥ २ ॥
लोक शिक्षा हित, "बहिन" अवतार तुमने था लिया।
हो निर्विकार शक्ति तथापि तुमने नर सदृश कौतुक किया ॥ ३ ॥
"श्री राम" नाम ललाम जिन्ह का सर्व मंगल धाम है।
उन "बहनोई" को भी "सार" का श्रद्धा समेत प्रणाम है ॥ ४ ॥

छन्द

"श्री सिद्धकिशोरी" बहिन आपने चरितामृत बरषाया।
चमत्कार से पूर्ण अमित लीला ललाम दरपाया ॥
भक्तन के उर भली भाँति से भक्ति भाव सरसाया।
कर-स्पर्श अनूपमता से प्रेमिन को हरषाया ॥

छन्द

अन्तर यामिनि दिव्य दया मयि अति उदारता कीन्हो।
त्रिकालज्ञ स्पर्श मात्र से मन्त्र मुग्ध करि लीन्हो ॥
सिद्धकिशोरी बहिन आपने नेम प्रेम जब चीन्हो।
तब तो रामगुपालदास को निज भइया पद दीन्हो।

घनाक्षरी

चारु चरितामृत अनोखे चोखे मांगलीक।
अद्भुत अनूप सोई वन्दि गुन गाऊँ मैं ॥
लीला जो ललाम सुख धाम है तमाम तामैं।
लिपि बद्ध लेख लिखि ललकि लखाऊँ मैं ॥
विश्व के बिहारी की निहारी आदि शक्ति दिव्य।
सर्वेश्वरी मानि उर ध्यान धरि ध्याऊँ मैं ॥
चाह तब भइया की है सिद्ध श्रीकिशोरी तेरे।
पद अरविन्द को मिलिन्द बन जाऊँ मैं ॥

सुन्दरी छंद

सिद्धकिशोरी शक्ति शिरोमणि हैं।
सब सिद्धि प्रदान करैं छन माहीं ॥
शुचि दिव्य उदार अलौकिक रूप प्रभा।
पसरी प्रिय प्रेमिन के मन माहीं ॥
लखि शील उदार पना करुणा।
रस व्यापि गयो खल मूढ़न माहीं ॥
"मधुरी" अवलोकन बोलन की।
अभिलाष करैं बसु लोकन माहीं ॥

छंद

पाई न गति केहि पतित पावन, राम भज सुन शठ मना।
गनिका, अजामिलु, व्याध, गीधु गजादि खल तारे घना ॥
आभारि, यवन, किरात, खल, स्वपचादि, अति अघ रूप जे।
कहि नाम वारक तेपि पावन, होंहि राम नमामि ते ॥

दोहा

कलियुग सम जुग आन नहिं जो नर कर विस्वास।
गाइ राम गुन गन विमल भवतर बिनहिं प्रयास ॥
अस प्रभु दीनबन्धु हरि कारन रहित दयाल।
तुलसिदास सठ तेहि भजु छाँड़ि कपट जंजाल ॥
जो चेतन कहँ जड़ करइ जड़हि करइ चैतन्य।
अस समर्थ सीतारामहिं भजहिं जीव ते धन्य ॥

चौपाई

नाम जपत प्रभु कीन्ह प्रसादू। भगत सिरोमनि भे प्रहलादू ॥
ध्रुव सगलानि जपेउ हरि नाऊँ। पायउ अचल अनूपम ठाऊँ ॥
सुमिरि पवनसुत पावन नामू। अपने बस करि राखे रामू ॥
भाये कुभाय अनख आलस हूँ। नाम जपत मंगल दिसि दस हूँ ॥
कहों कहाँ लगि नाम बड़ाई। राम न सकहिं नाम गुन गाई ॥

अनन्त श्री राम जी महाराज की वंशावली

१–अव्यक्त २–श्रीब्रह्माजी ३–श्रीमरीचि मुनि ४–श्रीकश्यप मुनि ५-श्रीविवस्वान् महाराज (सूर्य्य) ६-श्रीमनुमहाराज ७-श्री इक्ष्वाकु महाराज ८-श्रीकुक्षि महाराज ९-श्रीविकुक्षि महाराज १०-श्रीबाण महाराज ११-श्रीअनरण्य महाराज १२-श्रीपृथु महाराज १३-श्रीत्रिशंकु महाराज १४-श्रीधुन्धुमार महाराज १५-श्रीयुवनाश्व महाराज १६-श्रीमान्धाता महाराज १७-श्रीसुसन्धि महाराज १८-श्रीध्रुवसन्धि महाराज १९-श्रीभरत महाराज २०-श्रीअसित महाराज २१-श्रीसगर महाराज २२-श्रीअसमंजस महाराज २३-श्रीअंशुमानजी २४-श्रीदिलीपजी २५-श्रीभगीरथजी २६-श्रीकुकुस्थ महाराज २७-श्रीरघु महाराज २८-श्रीकल्माषपाद महाराज २९-श्रीशंखण महाराज ३०-श्रीसुदर्शन महाराज ३१-श्री अग्निवर्ण महाराज ३२-श्रीशीघ्रग महाराज ३३-श्रीमरु महाराज ३४-श्रीप्रशुश्रुक महाराज ३५-श्रीअम्बरीष महाराज ३६-श्रीनहुष महाराज ३७-श्रीययाति,महाराज ३८-श्रीनाभाग महाराज ३९-श्री अज महाराज, ४०-श्रीदशरथमहाराज के पुत्र ४१-श्रीरामजी महाराज श्री भरतजी, श्री लक्ष्मणजी तथा श्री शत्रुघ्न जी महाराज हुये।

अनन्त श्री विदेह जी महाराज की वंशावली

१-श्रीनिमि महाराज २-श्रीमिथि महाराज ३-श्रीप्रथमजनक महाराज ४-श्रीउदावसु महाराज ५-श्रीनन्दिवर्धन महाराज ६-श्री सुकेतु महाराज ७-श्रीदेवरात महाराज ८-श्रीबृहद्रथ महाराज ९-श्रीमहाबीर महाराज १०-श्रीसुधृति महाराज ११-श्रीधृष्टकेतु महाराज १२-श्रीहर्यश्व महाराज १३-श्रीमरु महाराज १४-श्रीप्रतीन्धक महाराज १५-श्रीकीर्तिरथ महाराज १६-श्रीदेवमीढ महाराज १७-श्रीविबुध महाराज १८-श्रीमहीध्रक महाराज १९-श्रीकीर्तिरात महाराज २०-श्री महारोमा महाराज २१-श्रीस्वर्णरोम महाराज २२-श्रीह्रस्वरोम महाराज २३-श्रीशीरध्वज महाराज जो श्री जनक महाराज करके विख्यात हुये २४-श्रीलक्ष्मीनिधि महाराज।

Scanned by CamScanner

श्री:

श्री अमररामायणान्तर्गत श्री किशोरी जी के भैया श्री लक्ष्मीनिधि जी के ननिहाल एवं ससुराल

—:※:—

अग्निकोण में एक कोंण देश है। उसमें एक रियासत विकाशापुरी है। वहाँ के राजा का शुभ नाम था श्री भूरिमेधा जी एवं उनकी महारानी का नाम श्री सुधाप्रिया जी। उनकी दो पुत्रियाँ श्री सुनैयना जी एवं श्री कान्तीमती जी थीं। इन दोनों का शुभ विवाह श्री जनकपुर (मिथिलाधाम) के महाराजा विदेह श्री जनक जी (श्री शीरध्वज) महाराज के साथ हुआ था। महारानी श्री सुनैयना जी की एक पुत्री श्री सीता जी (जानकी जी) एवं एक पुत्र श्री लक्ष्मीनिधि भी थे। श्री जानकी जी का शुभ विवाह श्री राम जी महाराज के संग धनुष भंग द्वारा हुआ।

दूसरी रानी श्री कान्तीमती जू की एक पुत्री श्री उर्मिला जी थीं। जिनका शुभ विवाह श्री लक्ष्मण जी महाराज के संग हुआ। इस प्रकार श्री लक्ष्मीनिधि के नाना का नाम हुआ श्री भूरि-मेधा जी, व नानी का श्री सुधाप्रिया जी, एवं मामा का नाम श्री सुमाल और श्री कुन्डल जी!

ससुराल

दक्षिण दिशा में विडालक देश में बैडाला रियासत के राजा श्री श्रीधर जी थे। उनकी रानी का शुभ नाम श्री सुकान्ता जी था। उनकी एक पुत्री श्री सिद्धि जी व पुत्र श्री कान्तीधर जी थे। श्री जानकी जी के भैया श्री लक्ष्मीनिधि जीका शुभ विवाह श्री सिद्धि जी के साथ होने से श्री कान्तीधर जी इनके साले, राजा श्रीधर जी श्री लक्ष्मीनिधि के ससुर, एवं श्री सुकान्ता जी इनकी सास हुईं।

वक्तव्य

(लेखक की ओर से)

प्रिय पाठको। मैं इस पावन जीवनी को प्रारम्भ करने से पहले यह बता देना चाहता हूँ कि भगवान की लीला विभूति का स्मरण एवं उनके भक्तों का जीवन चरित्र लिख या पढ़ सुन कर हम उन्हें कुछ दे तो देते नहीं, केवल अपने हृदय में जमे पापों का नाश ही कर देते हैं। कारण कि, ऐसे भगवत्कृपा पात्रों की जीवनी भी कलिमलग्रसित जीवों के समस्त पाप ताप दुःख दर्द को समूल नष्ट करने के लिये सञ्जीवनी ही है।

किसी पुण्यात्मा पुरुष के जीवन का कथन करना इसे जीवनी लिखना कहा जाता है। अब सवाल यह होता है कि जो हमारे तन में, मन में और हमारी आँखों में बसा हो, फिर उस की जीवनी को क्या लिखना? सज्जनो! यह सब ठीक है, परन्तु मेरा सोया हुआ मन जग उठा एवं छिपी हुई प्रीति तड़प उठी। तभी इसे लिखने का प्रयास हुआ! यह इस समय के एक परम प्रतापी आदर्श श्री लीलाबिहारी स्वरूप का जीवन वृत्तान्त अर्थात् उनके अद्भुत चमत्कारी चरित्रों का भंडार है। उनका एक-एक चरित्र अलौकिक तथा अमूल्य है।

सज्जनो! मैं न तो कवि हूँ न पण्डित और न ही कोई लेखक। तब मेरे जैसा अनाड़ी ऐसे महान् पुरुष की जीवनी को क्या लिख सकता है? परन्तु जैसे मच्छर से लेकर गरुड़ तक सभी पक्षी अपनी २. शक्ति अनुसार आकाश में उड़ते हैं, तथा शेष, महेश, शारदा से लेकर एक साधारण प्रभु प्रेमी भी अपने प्रभु के गुण कथन करता ही है, इसी प्रथा का अवलम्ब लेकर मैंने भी अपनी तुच्छ बुद्धि के अनुसार श्री सीताराम जी तथा श्री

गुरुदेव के बल-भरोसे पर ही अपनी खोजपूर्ण, जहाँ तक मुझसे हो सका, श्री अयोध्याधाम बिहौती कीर्तन समाज (जिनके संचालक भक्तवर श्री १०८ श्री रामों जी महाराज थे, एवं वर्तमान सञ्चालक व मालिक पुजारी श्री रामशंकरशरण जी महाराज हैं)। श्री जानकी जी के लीलास्वरूप (श्री सिद्ध-किशोरी जी) के जीवन चरित्रों का संग्रह करके उनकी स्मृति दिलाते हुये इसे लिखने व प्रकाशित कराने का साहस किया है। जिससे संसार में उनके शुभ चरित्रों का प्रचार व प्रसार हो कर जगत् जीवों का कल्याण हो। सिद्ध महान् पुरुषों के जीवन चरित्रों को सुनने से मनुष्य के जीवन पर बड़ा भारी प्रभाव पड़ता है, और यदि उन चरित्रों का श्रद्धापूर्वक मनन किया जाये तो कामधेनु की भाँति मनोकामना का भी फलदायक होता है। आशा है कि धर्म को काँटा समझने वाले लोग भी इन दिव्य चरित्रों से कुछ लाभ उठा सकेंगे।

सर्वज्ञता का अभाव होने से मनुष्यमात्र भूल का पात्र तो है ही। भूल तो सभी से हुआ ही करती है। इसलिये दृष्टिदोष अथवा विचारभ्रम से यदि इस जीवनी में कहीं कुछ भूल दिखाई पड़े तो पहाड़ खोद कर चूहा निकालने के झंझट में न न पड़ कर प्रेमीजन इस जीवनचरित्र से सार ग्रहण करने की ही उदारता दिखायेंगे।

जड़ चेतन गुण दोषमय, विश्व कीन्ह करतार।
संत हंस गुण गहहिं पय, परिहरि वारि बिकार॥

श्री युगल सरकार प्रिया-प्रीतम श्री सीताराम जी महाराज को मेरा कोटिशः प्रणाम है कि जिनकी असीम कृपा द्वारा ही मुझे इस परम पुनीत ग्रन्थ को लिखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। श्री सिद्धकिशोरी जी की इस जीवन झाँकी की रचना प्रेमीजनों के कल्याणार्थ ही हुई है, जो कि उनको उपहार रूप में भेंट की

जायेगी। इसका मूल्य केवल सप्रेम "दैनिक पाठ" होगा।

पाठको! इस जीवनी की भूमिका एवं अपनी अनुमति सम्मति में कुछ महानुभावों ने मेरी भी प्रशंसा लिख डाली है, कि भैया जी ने यह किया, वह किया, जनता का बड़ा उपकार किया! मैंने क्या किया? कुछ भी नहीं। सज्जनो! मन तो ठहरा तरंगों का समुद्र। मेरे मन में भी तरंग उठी, तो श्री सिद्ध-किशोरी जी की प्रेरणा एवं कृपा द्वारा ही मैंने इधर-उधर बिखरे चरित्रों को संग्रह करके लिख डाला, और प्रेमी भक्तजनों ने इसे प्रेमपूर्वक छपवा डाला, तो फिर मेरी इस में कौन सी बड़ाई हुई?

मैं तो अज्ञानी हूँ, अनुभव शून्य हूँ, मुझ में भावभक्ति नहीं। इस जीवनी को पढ़ने-सुनने से पाठकजनों को कुछ लाभ तथा मनोरंजन भी होगा या नहीं, इस बात को भी मैं नहीं जानता। मगर हाँ! इतना जरूर है कि इस जीवनी-सम्वाद में श्री सिद्ध-किशोरी-रस-रूपी-सरिता का प्राकट्य होगा। श्री सिद्धकिशोरी जी के कमलरूपी मुख से निकले मधु को पीकर रसानुरागी तृप्त एवं मस्त होंगे। आशा है कि सभी भक्तजन इस रस का संग्रह करके लाभ उठावेंगे।

मैं चाहता हूँ कि इस पवित्र जीवनी के प्रचार द्वारा इस कराल कलिकाल में जनता का भगवद्भक्ति लाभ से उद्धार हो। साथ ही साथ लेखक एवं प्रकाशक तथा प्रेमी भक्त समाज का परिश्रम भी सफल हो। अब यदि प्रेमीजन इस जीवनी का प्रेमपूर्वक स्वागत करते हुये इसका मनन कर अपने दुखमय जीवन को सुधार कर कुछ भी शान्ति प्राप्त कर सके, तो मैं अपने सम्पूर्ण परिश्रम को सफल समझूँगा। लेखक

अधिकारी रामगोपालदास (भइया जी)

Scanned by CamScanner

भूमिका

परम आदरणीय वीतराग श्री भागवती कथा के सुप्रसिद्ध लेखक ब्रह्मचारी श्री प्रभुदत्त जी महाराज संकीर्तनभवन झूँसी (प्रयाग) द्वारा लिखित भूमिका।

अवतारा ह्य संख्येया हरेः सत्वनिधेर्द्विजाः ।
यथा विदासिनः कुल्याः सरसः स्युः सहस्रशः ॥

हमारे शास्त्रों में भगवान के अनेक प्रकार के अवतार बताये गये हैं। युगावतार, कल्पावतार, अंशावतार, आवेशावतार, मन्वन्तरावतार, कलावतार आदि-आदि इनके अनेक भेद बताये गये हैं। अवतारों की कोई गणना नहीं। जैसे नहर में से असंख्यों छोटी-छोटी कूलें निकल कर पृथ्वी को तृप्त करती हैं उसे शस्य श्यामला बनाती हैं, इसी प्रकार उन सत्वनिधि परात्पर प्रभु से अनेक छोटे बड़े अवतार प्रगट होकर भक्तों को सुख देते हुये उनकी मनोकामनाएँ पूर्ण करते हैं। भक्तों के भेद से उपासना के भी अनेक भेद हैं। बहुत से भक्त भगवत अर्चा विग्रहों में प्रत्यक्ष दर्शन पाते हैं। अर्चा विग्रह भी अर्चावतार ही होते हैं। बहुत से लीलास्वरूपों की उपासना करते हैं, और लीलास्वरूपों में ही उन्हें भगवत-साक्षात्कार हो जाता है।

लीलास्वरूप जो शृंगार करके आवें, तो सभी भावुक भक्तों के लिये वन्दनीय हैं। किन्तु लीलास्वरूपों में भी कोई-कोई स्वरूप ऐसे चमत्कारी होते हैं कि वे शृंगार में हों या बिना शृंगार के, उनमें भगवत्ता प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर होती है। श्री अवध में तथा श्री वृन्दावन में ऐसे स्वरूपों के कभी-कभी भावुक भक्तों को दर्शन हो जाते हैं और वे अपनी सर्वज्ञता भी अपने

भक्तों पर प्रगट कर देते हैं। तभी उनकी विशेष मान्यता होती है। वे भी अवतार ही हैं। किन्तु देखा गया है कि ऐसे चमत्कारी लीला स्वरूप अधिक दिन इस पृथ्वी पर निवास नहीं करते, कुछ ही दिन अपनी लीला दिखाकर अन्तर्हित हो जाते हैं। मैंने तो दर्शन किये नहीं, किन्तु अभी हाल में ही श्री अवध में ऐसे ही एक श्री रामचन्द्र भगवान के लीलास्वरूप थे। भक्तगण उन्हें प्रत्यक्ष भगवान ही मानते थे। जब मैं फरुखाबाद गया तो वहाँ बड़े-बड़े ऊँचे और विद्वान साधक उनकी भगवतरूप में उपासना करते मिले, और अनेक चमत्कार भी उनके बताये। ऐसे ही एक श्री किशोरी जी के लीलास्वरूप श्री अवध के विहौतीभवन में हो गये हैं। उनके चमत्कारों के ही कारण अवध में वे "श्री सिद्धकिशोरी जी" के नाम से प्रसिद्ध थे। मैंने उनके दर्शन किये हैं और जो उनमें भगवत्-बुद्धि रख कर अत्यन्त निष्ठा रखते थे उनका भी संग किया है। वास्तव में वे बड़े ही चमत्कारी लीलास्वरूप थे। उनकी अनेकों सिद्धि की तथा अन्तर्यामीपने की घटनायें प्रसिद्ध हैं। जिनमें से कुछ श्री भइया रामगोपाल दास जी महाराज की कृपा से इस पुस्तक में संग्रहीत हैं। श्री सिद्धकिशोरी जी का स्वरूप इतना भव्य था कि जो भी उनके दर्शन कर लेता वह प्रभावित हुये बिना नहीं रहता था। इतनी छोटी अवस्था में इतनी सर्वज्ञता, इतनी कार्य और व्यवहार पटुता अन्यत्र कहीं देखने में नहीं मिलती।

मैंने अवध में इसके पूर्व भी दर्शन किये थे इसका स्मरण नहीं या प्रयाग में ही किये थे। किन्तु तब तक मेरा कोई विशेष परिचय नहीं था। किन्तु वे तो मुझे जानती ही थीं। जब आज से २२-२३ वर्ष पूर्व हमारा चौदह महीने का अखण्ड नाम संकीर्तन यज्ञ चल रहा था, तब उसमें दो ढाई महीने आकर श्री उड़िया बाबा जी महाराज विराजे थे। ग्वालियर के महात्मा

श्री रामदास जी रामायणी भी थे। यज्ञ समाप्त करके ५०-६० आदमियों के साथ श्री उड़िया बाबा जी महाराज ने श्री अयोध्या की यात्रा की। तब तक वे किसी भी सवारी पर नहीं चढ़ते थे। इसलिये हम सब भी पैदल ही श्री अवध तक गये। वहाँ जाकर हमने बिहौतीभवन में उनके दर्शन किये। हमें उन्होंने अपने हाथों वस्त्र प्रदान किये, और अत्यन्त ही प्रेम प्रदर्शित किया। तभी मेरा विशेष परिचय हुआ। इसके लगभग दो वर्ष के पश्चात् श्री पशुपतिनाथ जी के दर्शन को हम नैपाल गये। नैपाल से लौटते समय श्री जनकपुरधाम जाने की इच्छा से श्री सीतामढ़ी उतरे। संयोग की बात, कि जिस स्थान में हम उतरे थे वहीं श्री पुजारी जी अपने स्वरूपों सहित विराजमान थे। अवध के सुप्रसिद्ध संत श्री रामपदार्थदास जी (श्री वेदान्ती जी) महाराज भी वहीं ठहरे थे। स्वरूपों की सेवा में कर्वी (चित्रकूट) के सुप्रसिद्ध संत साकेतवासी श्री महन्त जयदेवदास जी महाराज के कृपापात्र अधिकारी श्री रामगोपाल दास जी (भइया जी) भी थे। इनका तो उन में साक्षात् श्री किशोरी जी का ही भाव था। इनकी निष्ठा परिचर्या और भक्ति को देख सुन कर मैं तो अत्यन्त ही प्रभावित हुआ। किसी विशेष कारणवश हम श्री जनकपुर नहीं जा सके, इसलिये रेल में भी स्वरूपों के साथ ही साथ लौटे। उस समय उनके प्रभाव की कुछ झाँकी हुई।

इसके कुछ ही दिनों पश्चात् सुना गया, कि वे इस लोक की लीला समाप्त करके अन्तर्हित हो गईं। इसके कुछ ही वर्षों के पश्चात् बिहार एसेम्बली के अध्यक्ष (स्पीकर) श्री रामदयालु सिंह जी मेरे पास मकान बना कर झूँसी में रहे। वे श्री किशोरी जी के अनन्य भक्तों में से थे। उनमें साक्षात् श्री किशोरी जी का भाव रखते थे, और अपनी शक्ति के अनुसार

सदा सेवा भी करते रहते थे। उन्हीं की आज्ञा से श्री पुजारी जी से इन्होंने दीक्षा भी ली थी। इनके द्वारा भी बहुत प्रशंसा सुनी। उनके सम्बन्ध की बातें इसी पुस्तक में पाठक प्रथक पढ़ेंगे। अतः उनकी पुनरावृत्ति करने की आवश्यकता नहीं। जैसा कि मैं पूर्व ही बता चुका हूँ ऐसी विभूतियाँ अधिक समय अवनी पर स्थिर नहीं रहतीं। जिन श्री रामजी के विग्रह का मैंने उल्लेख किया, वे भी १७-१८ वर्ष की आयु में इहलोक की लीला समाप्त कर गये। ऐसे ही श्री सिद्धकिशोरी जी भी १५ वर्ष की आयु में अन्तर्हित हो गईं। किन्तु यहाँ अपने अनेकों भक्तों को छोड़ गईं। उन्हीं की स्मृति दिखाने को यह पुस्तक रूप में प्रयास है। आशा है कि भावुक भक्तों को इससे प्रेरणा मिलेगी। वे लोग बड़भागी हैं जिन्होंने श्री सिद्धकिशोरी जी की पूर्ण कृपा प्राप्त की है। और वे भी नर-नारी बड़भागी हैं, जिन्होंने उनके दर्शनों का लाभ लिया है। इन शब्दों के सहित मैं अपने इस वक्तव्य को समाप्त करता हूँ। और श्री किशोरी जी के अमल विमल पादपद्मों में पुनः-पुनः प्रार्थना करता हूँ कि वे हमें भी अपने चरणरज की भक्ति का अधिकारी बनावें। इति शुभम्!

प्रभुदत्त ब्रह्मचारी, संकीर्तन भवन
झूँसी (प्रयाग)

श्री सिद्धकिशोरी जी के सम्बन्ध में कुछ सुप्रसिद्ध सन्त महात्माओं की शुभ सम्मतियाँ

सकल गुण सम्पन्न विद्यावारिधि परमपूज्य श्री रामपदार्थदास जी महाराज (वेदान्ती जी) श्रीजानकीघाट, श्री अयोध्या जी के

हृदय उद्गार

अनन्त श्री साकेताधीश परात्पर प्रभु श्री सीताराम जी यों तो व्यापक रूप चराचर स्वरूप हैं ही! परन्तु अपनी लीला विभूति में अपने भक्तों को सुख देने के लिए अनेक अवतार धारण करते हुए भी जब हृदय में पूर्ण शान्ति नहीं प्राप्त कर पाते, तब अवतारकालीन समय इत्यादि की बाधा से बाध्य होकर, किसी महान व्यक्ति के रूप में नर रूप धारण करके लीलानुकरण वेष में, अपने भक्तों के मनोभिलाषित सभी भावों की पूर्ति करते हुये, पुनः अपने शाश्वत रूप में परिणत हो जाते हैं। इस लीलानुकरण अवतार में अनेकों भक्तों को अपने इष्ट की प्राप्ति हुई है। तथा यह लीलानुकरण अनादिकालीन एवं सभी शास्त्रसम्मत है। जैसे श्रीमद्भागवत, श्री कौशलखण्ड, श्री शिव संहितादि। श्री शिवसंहिता जी के पंचम पटल के बीसवें अध्याय में इस लीलानुकरण प्रतिष्ठादि की विधि लिखी है:— कि उत्तम ब्राह्मण कुल के बालक हों, सर्वांग सुन्दर हों, तथा चित्ताकर्षक हों, उनकी विमुग्धावस्था हो, उनको माता-पिता से लेकर अर्चाविग्रह की भाँति पंचामृतादि से वेदमंत्रों तथा श्री युगल मंत्रराजादि से विधिवत् उपनयन संस्कार व श्री वैष्णव पंचसंस्कार तथा भगवत् प्राणप्रतिष्ठा करें। पुनः उनको इस प्रकार का बोध करावें, कि आप श्री सच्चिदानन्दकंद श्री राम जी

है, तथा आप के माता-पिता श्री कौशिल्या अम्बा तथा चक्रवर्ती श्री दशरथ जी महाराज हैं। और श्री किशोरी जी को भी इस प्रकार से बोध करावें, कि आप श्री मिथिलेश राजकुमारी श्री जानकी जी हैं, आप के पिता श्री सीरध्वज जनक जी महाराज तथा आप की माता श्री सुनयना अम्बा जी हैं। इन सब संस्कारों के पश्चात उनकी आर्चाविग्रह की भाँति अनन्यकाल पूजा सेवा करें। किसी भी समय उनका कोई अपचार न हो जाय। इस प्रकार यदि जो भी व्यक्ति श्री लीलानुकरण स्वरूप यज्ञ करते हैं, वह लीलाविहारी युगल साक्षात परयुगल स्वरूप हो जाते हैं। तथा उनके चरित्र भी भक्तों के भावानुसार सभी भावों की पूर्तिकारक होते हैं। कारण कि यही आवेशावतार है। ठीक इसी उक्त विधि के अनुसार श्री बिहारीभवन के पुजारी श्री रामशंकरशरण जी महाराज ने श्री सिद्धकिशोरी जी को हम सब के समक्ष प्रत्यक्ष किया था। जिनके कुछ इनेगिने चरित्रों का संग्रह श्री रामगोपालदास जी अधिकारी स्थान कर्त्ता श्री चित्रकूट (भइया श्री लक्ष्मीनिधि जी) ने किया है। इन चरित्रों को मैंने आद्योपान्त कथा रूप में श्रवण किया है। यह सब अक्षरशः सत्य हैं। इसके अतिरिक्त श्री सिद्धकिशोरी जी का मैंने भी स्वयं कई बार दर्शन किया था। उनकी बाल्यकालीन लीलाओं में ही अनुक्षण अनोखे-अनोखे चमत्कार देखने में आया करते थे, प्रत्येक शब्द में गूढ़ रहस्य आप्लावित रहा करता था। अतः उनके विषय में जो भी आख्यायिकायें लिखी गई हैं, यह सभी सत्य तथा अकाट्य हैं। अब हम लोगों को चाहिए कि श्री सिद्धकिशोरी जी के इस चरित्ररूप महान ग्रन्थराज को श्री "सीतायन" ग्रन्थ की भाँति पूज्य मान कर पूर्ण श्रद्धा, भक्ति के साथ नियमपूर्वक पाठ करें, तथा दूसरों को श्रवण करा कर उनके भी हृदय में श्री सीताराम जू की दिव्य भक्ति रूप शरद

राका शशि चंद्रिका उदय करावें, तथा उसके फलस्वरूप इस घोर अंधकारपूर्ण भवाटवी से निकल कर सदा के लिये श्री सीताराम जू के श्री साकेतधाम को प्राप्त करें।

दृश्य रूप में तो सभी भक्तजन श्री लीलास्वरूपों के प्रेमी होते ही हैं। परन्तु, हमें तो श्री सिद्धकिशोरी जू के अदृश्य रूप में भी भैया श्री लक्ष्मीनिधि जी की अटूट श्रद्धा, विश्वास, तथा अचल भक्ति देख सुन कर अति प्रसन्नता होती है! अन्त में मेरी तो श्री सिद्धकिशोरी जी से यही प्रार्थना है कि वह अपनी और भी बिलखती हुई आत्माओं को अपनावें, तथा मुझे भी निरन्तर दिव्य दम्पति, प्रिया प्रीतम श्री सीताराम जी की परिचर्या में लगायें, कि जिससे अनवरत अक्षुण्य रूप से श्री युगल माधुरी रूप की झाँकी होती रहे। मानव जीवन की सार्थकता यही है।

वेदान्ती रामपदार्थदास

रसराज उपासक कविकुल शिरोमणि पं० श्री मैथिलीशरण जी महाराज (भक्तमाली) नज़र बाग, श्री अयोध्या जी का

नम्र निवेदन

मृदुल मोद मुद माधुरी, करुणा सिन्धु गम्भीर।
स्वामिनि जय श्री मैथली, आर्य्य श्री रघुबीर॥

महान हर्ष का विषय है कि आज मैथिली श्री स्वामिनी किशोरी जी के भावुक सुहृदय भ्राता परम प्रेमी श्री लक्ष्मीनिधि जी (अधिकारी श्री रामगोपालदास जी स्थान कर्वी-चित्रकूट) के प्रेम एवं पवित्र भावना की परिभाषा करने का मुझे सौभाग्य प्राप्त हो रहा है। यों तो हमारे पूज्य श्री अयोध्या जी के बड़े-बड़े महानुभाव महात्मा भावुक रसिक अनन्य और विद्यानिधि हैं,

जिन्होंने "श्री सिद्धकिशोरी जी" के इस रहस्यमय चरितामृत की भली भाँति आलोचना और अपनी-अपनी अनुमति प्रदान की है। अब हमारे जैसे अल्प बुद्धि वालों का उनके सामने इस विषय में लेखनी उठाने का साहस ही नहीं पड़ रहा। "तदपि कहे बिन रहा न कोई" इसी आधार पर तोतरी भाषा की तरह बाल विनोद के समान अनमिल अक्षरों में लेखनी लिखने को लालायित हो रही है। इसमें दो विषय (ब्रह्म तथा जीव) की तरह ओत-प्रोत अवर्णनीय हैं। एक तो भइया श्रीमान् लक्ष्मीनिधि जी का हृदय, और दूसरा अद्भुत एक लीलास्वरूप (श्री सिद्धकिशोरी जी) द्वारा व्यक्तिविग्रह में अलौकिक चमत्कारों का अवतीर्ण। पहले हम श्री सिद्धकिशोरी जी के सम्बन्ध में ही कुछ टूटे-फूटे शब्दों द्वारा निवेदन करके पीछे श्री भइया जी के सम्मुख होंगे।

श्री मिथिला अन्तर प्रदेश निमिपाल (नैपाल) की तराई के पर्वतों में एक महान योगिराज तपस्वी महात्मा स्वामी श्री गिरीशानन्द जी विचरा करते थे। वह कभी-कभी श्री जनकपुर धाम में भी उतर आते थे और अकिञ्चन भाव से अज्ञात बन कर वहाँ के मुनि, महात्माओं व भावुक उपासकों के आश्रमों में जा-जाकर उनके भाव भूषित सत्संग से अपने तपश्चर्या से तपे भये हृदय को शीतल करते रहते थे। स्वामी जी वेद-वेदाङ्ग, शास्त्रों के विद्वान थे, और उपासना-रहस्य के सत्संग को करते-करते उनके अद्वैत हृदय में द्वैत का संचार भी हो गया था। इस-लिये श्री किशोरी जी के श्री विग्रह में तल्लीन हो विलास करने का सौभाग्य प्राप्त कर काञ्चन वन में स्थायीरूप से विचरने लगे।

श्री मिथिला जी की ८४ कोसी परिक्रमा जो प्रति संवत् फाल्गुन मास में हुआ करती है, एक बार उसमें जिला छपरा

अन्तर्गत माणीपुर ग्राम निवासी पं० श्री सिंघेश्वर तिवारी जी भी सपत्नीक वहाँ पधारे, जो श्री मिथिला जी के बड़े निष्ठावान थे। वह अचानक श्री स्वामी जी महाराज की पर्ण-कुटीर पर काञ्चन वन में भी पहुँचे, और अपनी पत्नी श्री युगल सहचरी जी के सहित श्री स्वामी जी का दर्शन करके कृत-कृत्य हुये। श्री स्वामी जी भी उनकी निर्दम्भ भोली भक्ति को देख उनमें अपने स्वात्म भाव का सञ्चार करने लगे। कुछ काल जब वहां निवास करके चलने का मनोरथ हुआ तब श्री स्वामी जी ने आज्ञा प्रदान की कि कालान्तर में हम आप के यहाँ जन्म लेंगे, और यह श्री युगल सहचरी जी हमारी अम्मा होंगी। इन्हीं की गोद के हम शिशु बनेंगे। आप दोनों को हम एक मंत्र बताते हैं उसी का जाप करते रहिये। उसके पश्चात् वह दम्पति चले आये और वैसे ही उसी आकाँक्षा में काल बिताने लगे। संयोगवश सम्वत् १९७९ वि० में स्वामी जी ने अपने इस भौतिक कलेवर का त्याग किया और सम्वत् १९८० में अम्बा श्री युगल सहचरी के गर्भ से वही ब्रह्मवेत्ता स्वामी जी पुत्र बन कर प्रकट हुए। वह बड़े चमत्कारी और प्रतिभाशाली थे। उत्तरोत्तर अपनी कलाओं का विकास करने लगे, और ३ वर्ष की अवस्था होने पर उन्हें अपने सुस्वरूप का बोध होने लगा। संयोग से श्री अयोध्या जी के शृंगारी महात्मा महान रसराज भाव आवेशी श्री लीला बिहारी श्री युगल सरकार चारों भाइयों के दूलहा भेष के भोक्ता श्री किशोरी जी के नित अंगजा विभूति से प्रादुर्भूत श्री बिहौती भवन के महाराज पुजारी श्री रामशंकरशरण जी माणीपुर ग्राम में पधारे। (इन दम्पति के श्री गुरुदेव भी आप ही थे) और उस बालक स्वरूप को अवलोकन करते ही इनकी मति विभोर सी हो गई। वह इनको श्री अवध ले आये और विधिवत् प्रतिष्ठा करके इनका शृंगार श्री किशोरी जी का करने

लगे। अब जो जो सुख व अनुभव उनसे श्री विदेही भवन के श्री महाराज जी को हुआ वह तो अवर्णनीय है इसको वही जानें। सहचरी-जन, नारी, भक्त, साधुओं के प्रति जैसे जैसे भाव प्रकट किये और उन्हें सुख दिया सो कहे कौन? पर यहां आवश्यकता यह है कि हमें अपने भइया (श्री लक्ष्मीनिधि जी) के सरस हृदय की सराहना करनी है कि जिन्होंने श्री सिद्धकिशोरी जी के इन पवित्र चरित्रों का चित्रण करके हमारे सामने रक्खा है। यह चरित्र क्या है, यह श्री भइया जी के स्नेहात्मक हृदय के उद्गार हैं।

श्री भइया जी को श्री सिद्धकिशोरी जी का साक्षात्कार होते ही उस पुरातन प्रेम और भाव की जाग्रति तत्काल हो गई, और वह नित्य नया रंग छानने लगे। और श्री सिद्धकिशोरी जी ने स्वयं अपने ही कर कमलों से उस अचला लंगोटी वाले मुनि वेश का राजसी शृंगार राजकुमार की तरह करके और भइया-भइया कह कर उस दिव्यभाव की स्थापना भी कर दी। इधर आप भी निर्आवरण अपने भ्राता श्री लक्ष्मीनिधि जी की तरह ऐश्वर्य माधुर्यमई नई नई लीलाओं के केलि विनोद का रसास्वादन करने लगे, जिसे श्री भइया जी ने इस 'सिद्धकिशोरी चरितामृत सागर' में स्पष्ट किया ही है। यह कहने में अत्युक्ति न होगी कि भक्त का हृदय भगवान का खिलौना होता है। उस में जो जो तरंगें उठती हैं [illegible] भगवान को आकर्षणीय और मनोरंजनीय होती हैं। (उनका अभिषेक और प्रतिमा प्रभु के उल्लास एवं अहेतुकी कटाक्ष से होती रहती है) प्रेम और भाव क्या तत्व है इसको तो श्री भइया जी ने चरितावली में स्पष्ट करके दिखा ही दिया है। देखिये! भाव शब्द प्रकृति प्रदेश में बाजारू है। अतएव बाजार में बिक्री के लिये आई हुई चीज का ही भाव होता है। जनता में जबतक उस वस्तु का भाव न निकल जाये तब तक माल को न तो धनी बेच सकते हैं और न ही ग्राहक

ले सकें। पुनः भाव के निर्धार होते ही दोनों अपने-अपने स्वरूपानुरूप कार्य में प्रवृत्त हो जाते हैं। वस्तु पीछे बठाई जावेगी ग्राहक अपना पल्ला पहले पसार देगा! वैसे ही जीव अनादि काल से भगवान के समीप क्यों न खड़ा रहे और खड़ा ही है, पर न तो वह उसका स्पर्श कर सके और न इसको वे ही अंगीकार कर सकें। यद्यपि ग्राहक की तरह तुरां भगवान को ही है, और उससे भी कहीं ज्यादा बेचैनी और फ़िकर उस जीव को है। भाव का निर्धार करना (निर्ख निकालना) उस बाजार के मुखिया चौधरी का काम है। वह ग्राहक और मालधनी दोनों के मान का नहीं। वैसे ही यहाँ जीव और भगवान दोनों के अतिरिक्त तीसरे श्री आचार्य जब तक नहीं मिलते, तब तक भाव का निर्धार कैसे होवे। जिस समय आचार्य के द्वारा भाव का निर्धार हो जाता है तब भाव के अनुसार यह (जीव) भोग बन जाता है और प्रिय इसे भोगता है। भाव से ख़रीदी हुई वस्तु निस्संकोच भोग में आती है। जब से पलड़े में आई और गठरी में वँधी उसी समय से ख़रीदार का अहम्भाव (ममत्व) उसी में बढ़ने लगता है। भगवान भी इसे अपनी वस्तु मानकर क्या-क्या नहीं करते हैं। किन्तु यह जीव भोग होकर उनकी ख़रीदी हुई वस्तु बन कर भी बन्सी से बेधी हुई जीवित मछली की तरह पुनः जल में, एवं संसाररूपी समुद्र में कूद जाता है। इसी से उनमें गोते लगाता, उछलता, डूबता क्या-क्या नहीं सहता। भेदन हो जाने के कारण उस जल में भी नहीं रह सकता। अतएव संगति तो तभी है कि भाव हुआ और भोक्ता के हाथ बिका और भोग बन कर समस्त भोग पदार्थों की तरह भोग के स्वरूप में सभी आवृत्तियों को पार करके प्राप्त हुआ। श्री भइया लक्ष्मीनिधि जी भी इसी प्रकार अपनी प्रिय बहिन श्री सिद्धकिशोरी जी को साक्षात् आचार्य स्वरूपा पाकर उनके

द्वारा भाव का निर्धार होने पर बहनोई (श्री राम जी) के हाथ बिक ही तो गये! बस इसी प्रकार "कहाँ तो राज-राजेश्वरी स्थान कर्वी (चित्रकूट) की गद्दी का अधिकार, और कहाँ वह अनेक सेवक सेविकाओं से सेवित सत्कार, वह तो सब हो गया एक प्रिय पर निस्सार! कितनी-कितनी विपत्तियाँ आईं, क्या २ कष्ट आये, पर वह सब के सब श्री सिद्धकिशोरी (परम आचार्य) की कृपा कटाक्ष द्वारा पर्वत की राई एवं सूली की जगह काँटा होते गये। अंत में आज अकिञ्चन भाव को प्राप्त हो अपने प्रिय के गुणगान में विभोर हो अलाप कर रहे हैं।

प्रिय ने भइया जी को प्रथम तो अज्ञात रूप में पान्चाल देश (पंजाब) से आकर्षण करके व्रज में, तब श्री चित्रकूट में लाकर रक्खा। वहाँ से प्रिय बहिन श्री सिद्धकिशोरी जी द्वारा भाव निर्धार होते ही नित-विहार की निज-निकुन्ज सुप्रसिद्ध श्री जानकी घाट श्री रामवल्लभाकुन्ज में अपनी राजधानी श्री अयोध्याजी में पहुँच गये। यहाँ के अध्यक्ष वेद-वेदाङ्ग-विद् सकल शास्त्र पारंगत श्री १०८ श्री स्वामी रामपदार्थदास जी (वेदान्ती) महाराज हैं, जो अपने दिव्य सुशील गुणों से सभी को विमोहित कर लेते हैं। क्या करें। प्रसंग आजाने पर लेखनी मानती नहीं। श्री वेदान्ती जी महाराज वर्तमान काल में सन्त शिरोमणि हैं, जिनकी सहनशीलता, धैर्य, गम्भीरता और मिति भाषिता माधुर्य की खान हैं। यह महाराजजी श्री भइयाजी को इतने लालन पालन और गौरव के साथ आश्रय दिये हैं। आप के लिये यथा नाम तथा गुण, ठीक जैसे बहिन के घर में भइया बड़े मान से रहता है, वैसे ही आप अपनी बहिन की इस कुन्ज में सुख विलास कर रहे हैं। क्यों न हो! आखिर तो है भी श्री रामवल्लभाकुन्ज, और फिर स्वयं श्री वेदान्ती जी महाराज के आप इतने कृतज्ञ हैं कि सिद्ध गुरु शिष्य का भाव

होते हुये भी स्नेहवशात् कहीं अधिक से अधिक अन्तःकरण में जगह दे रक्खी है।

"प्रेम"

प्रायः प्रेम की परिभाषा सभी प्रेमीजन कुछ और ही करते हैं। वास्तव में वैसी है भी। परन्तु मेरा तो तोतरी वाणी का विनोद है, जरा इसे भी सुनिये। प्रेम अधिकांश प्रेमी का स्वरूप है, और पुनः वह रस रूप है। जब भोक्ता की भोग्य वस्तु पर हाव भाव, चाव, उमाव, अभिलाष, उल्लास एवं परियास होती है उसी को प्रेम कहते हैं। सो यह चीज तो भइया रामगोपालदासजी के ऊपर उनके प्रिय बहनोई श्री चक्रवर्ती-कुमार राघवेन्द्र-यार की भली भाँति प्रतीत होती है। क्यों न हो, सार बहनोई का दिव्य सम्बन्ध ही तो ठहरा!

अन्त में हम अपने भइया जी को अंकमाल देकर अपनी बड़ी बहिन श्री सिद्धकिशोरी जी की सेवा में इस लेख को समर्पित करते हैं। हमने उन्मादवश यदि कुछ अशिष्टता इस में करदी हो, तो हमारी इस भूल को क्षमा करेंगी। भइया जी के विषय में जो कुछ लिखा है, सो तो आपको भी स्वीकार होगा ही। यह हमारे श्री भइया ही हैं, इसलिये भइया तो सभी के एक हैं। जैसे भइया पर आपका प्यार वैसे ही हम सभी बहिनों का भइया पर दुलार! श्री सिद्धकिशोरी बहिन जी की जय, प्यारे भइया जी की जय। इति शुभम्। पं० मैथिली शरण

—:✽:—

रसिकाधिराज श्री युगल पादपंकज चंचरीक पूज्य श्री राम किशोरशरण जी महाराज, श्री हनुमत निवास, श्री अयोध्या का

हृद्भाव

पाठको! यह जो लेख आप सब के कर कमल में प्राप्त है इसमें एक उत्तम ब्राह्मण कुल बालक, अति सुन्दर उत्तम-उत्तम लक्षणों से लांछित, बालक अवस्था ही से जिनमें बोल चाल

से अति चमत्कार का लक्षण पाया जाता था, उनकी अवस्था जब सात आठ वर्ष की हुई, तब उनका श्री राजकिशोरी जी का शृंगार होकर झाँकी होने लगी। तब उनके कहने सुनने से अद्‌भुत-अद्‌भुत चरित्रों का प्रकाश होने लगे, जो कि देखने सुनने वालों को आनन्द समुद्र में निमग्न कर देते थे। उन चरित्रों से जो कुछ इस जीवनी में वर्णन है, वह आप पढ़कर आनन्द को प्राप्त तो होंगे ही। अब उन चरित्रों में विश्वास मानकर श्रद्धा करनी चाहिये, क्योंकि विश्वास ही फलदायक होता है। काष्ठ पाषाण में ईश्वर देखने में नहीं आते हैं परन्तु जिनको विश्वास है वे पाषाण से भी ईश्वर प्रगट कर लिये हैं। अतएव इनमें श्रद्धा विश्वास होना चाहिये, तर्क वितर्क न करनी चाहिये। तर्क वितर्क में तो सिवाय हानि छोड़ कर लाभ है ही नहीं। धन्य-वाद भइया श्री रामगोपालदास जी को है, कि जो अतिशय परिश्रम करके इसको प्रगट किया है। क्यों न हो, प्रेम ऐसा एक अनुपम रत्न ही है। "प्रेम बिना सब फीको ऐसे ! लवन बिना बहु बिंजन जैसे" !! रामकिशोरशरण

मान्यवर सद्‌शास्त्र बिशारद पूज्य पं० श्री अखिलेश्वरदास जी महाराज "व्यास" श्री रामघाट, श्री अयोध्याजी की

शुभ सम्मति

श्री लीलास्वरूपों के परमप्रिय प्रेमी भइया श्री रामगोपालदास जी अधिकारी स्थान कर्वी (चित्रकूट) जो कि इस समय १२ वर्षों से श्री जानकीघाट श्रीमान पूज्य श्री पण्डित जी महाराज के शुभस्थान में निबास कर श्री अवधवास कर रहे हैं, अपने इष्टदेव श्री सीताराम जी में इनकी भावना बहिन बहनोई की है। श्री बिहौतीसमाज श्री अयोध्या जी के एक अनुपम चमत्कारी लीलास्वरूप श्री सिद्धकिशोरी जी की गुण

गाथा का कुछ परिचय उनकी शुभ जीवनी में लिखकर जनता के समक्ष उपस्थित करते हुए श्री भैयाजी ने एक महान आदरणीय कार्य किया है। इसको आदि से अन्त तक पढ़ सुन मुझे तो महान हर्ष एवं आनन्द प्राप्त हुआ। श्री सिद्धकिशोरी जी के अलौकिक चरित्रों के अतिरिक्त इस जीवनी में भक्ति, ज्ञान, वैराग्य एवं कर्मयोग का सजीव चित्रण करते हुए प्रेम का पूर्ण प्रवाह भी प्रवाहित किया गया है। भइया जी की लेखन शैली विचित्र भावपूर्ण एवं बड़ी रँगीली और रसीली भी है। यद्यपि आपकी पंजाब जन्मभूमि होने के कारण उर्दू, अंग्रेजी एवं फ़ारसी की ही विशेषज्ञता है, तथापि आप की हिन्दी भी अत्यन्त मार्मिक है। यह भी श्री सिद्धकिशोरी जी की प्रसादी एवं अनुपम अनुकम्पा है। लीलास्वरूपों में जैसा भइया जी का शुद्ध प्रेम एवं दृढ़ भावना है वैसा ही इनको श्री युगल सरकार ने कोमल एवं भावुक हृदय भी दिया है। आप को बाल्यकाल से ही लीलास्वरूपों के सम्पर्क एवं सेवा में रहने का सौभाग्य प्राप्त है।

मैं अपना दुर्भाग्य समझता हूँ कि श्री सिद्धकिशोरी जी के लीलाकाल में मैं और कहीं था, जिससे उनकी लीलाओं का मैं अनुभव न कर सका। परन्तु उनके प्रतिनिधिस्वरूप श्री किशोरी जी (श्री पांच सरकार) की लीला सुखों का अनुभव किया। हमको अपूर्व, अनिवर्चनीय आनन्दानुभव हुआ। श्री पांच सरकार श्री किशोरी जी की स्वरूपाई के समय जब कभी श्री सिद्धकिशोरी जी की उदारता, दयालुता एवं सुशीलता आदि गुणों की चर्चा चलती तो मेरा हृदय व्याकुल हो उठता कि हाय! मैं उनका शुभ दर्शन न कर सका। तब उस समय अन्तर्यामिनी श्री सिद्धकिशोरी जी मेरी हार्दिक व्याकुलता को जानकर अपनी प्रतिनिधि श्री किशोरी जी के द्वारा ही अपने शुभदर्शनों का

अलभ्य लाभ प्रदान कर मेरे अशांत हृदय को शान्त एवं सुखी कर दिया करती थीं। मैंने उनके इस प्रकार के अन्तर्यामीपने के अपूर्व चमत्कारों का कई बार अनुभव किया है। वास्तव में श्री सिद्धकिशोरी जी इस कलिकाल के लीलास्वरूपों में अनुपम रत्न एवं दिव्य विभूति थीं। मैंने उनके बहुत से जिन-जिन चमत्कारी चरित्रों को प्रेमियों के मुखारविन्दों से कई बार सुना था, श्री लक्ष्मीनिधि भइया जी ने उन्हीं समस्त चरित्रों का संकलन इस ग्रन्थ में करके प्रेमीभक्तों को रसास्वादन कराया है। इसमें सन्देह नहीं कि यह जीवनी भावुक प्रेमीजनों के सूखे हुये हृदयों को प्रेम के जल से सींच कर तुरन्त हरा-भरा कर देने वाली है, तथा सर्व प्रकार से समस्त साधारण तथा असाधारण भक्तों के लिये भी उपयोगी है। नित्यप्रति इसके अध्ययन करने से प्रेमियों को अपूर्व सुख एवं लाभ होगा। मैं तो सादर इस जीवनी का स्वागत करता हुआ लेखक श्री भइया जी को भी धन्यवाद देता हूँ, जिन्होंने बड़े परिश्रम से ऐसे शुभ कार्य का सम्पादन करके प्रेमी समाज का उपकार किया है। कारण कि ऐसे अवतारी महापुरुषों की जीवनी भी कलिमल ग्रसित जीवों के लिये सञ्जीवनी हुआ करती है। पं० अखिलेश्वरदास

रूपरसमाते सखा श्री अवधेश राजकुमार पूज्य श्री धर्मभगवान जी महाराज, श्री सद्गुरु सदन, श्री अयोध्या जी के—

दो शब्द

श्री चित्रकूटान्तरगत स्थान कर्वी के अधिकारी श्री रामगोपाल दास जी चेला श्री स्वामी १०८ महन्त श्री जयदेवदास जी महाराज से मैं लगभग ३६ वर्षों से पूर्ण परिचित हूँ। आप बाल्यावस्था से ही श्री लीलाबिहारी स्वरूपों के अनन्य प्रेमी हैं तथा उसी प्रकार अद्वितीय गुरुभक्त भी हैं। आपने अच्छे-अच्छे

महान पुरुषों के द्वारा प्रेम, भक्ति, एवं लीलास्वरूपों की सेवा के रहस्यों का भलीभाँति अध्ययन किया है, इसलिये लीलास्वरूपों में सच्ची भावना तथा पूर्ण श्रद्धा के कारण ही आपको आज तक उनकी सेवा करने का सौभाग्य प्राप्त है। श्री युगल सरकार प्रिया प्रीतम में पहले तो आपकी दास भावना थी, परन्तु इधर २० २१ वर्ष हुये कि श्री विद्दौतीभवन के एक अपूर्व अनुपम चमत्कारी बालक श्री सिद्धकिशोरी जी के लीलास्वरूप ने हमारे ही सामने श्री अधिकारी जी का श्री राजकुमार का शृंगार अपने ही करकमलों द्वारा करते हुये इनको श्री मिथिलेश-राजकुमार (श्री भइया लक्ष्मीनिधि) के पद से विभूषित कर इनसे अपना तो बहिन-भैया का नाता जोड़ा एवं श्री रामजी से सार-बहनोई का नाता दृढ़ करा दिया। तब से आज दिन तक भइया जी अपने इष्टदेव श्री सीताराम जी के पादपंकजों में अनन्य लुब्ध मधुकरवत् परमानुरागी बन उसी भावनानुसार आनन्द एवं सुख लेते हुये मग्न रहा करते हैं।

इस समय श्री भइया जी ने उन्हीं श्री सिद्धकिशोरी जी के जीवन चरित्रों का भली भाँति संग्रह कर इनको प्रकाशित कराने की इच्छा से एक अनोखे ढंग से ग्रंथ लिखा है। इसकी भाषा में कोमलता, मृदुलता, एवं सौंदर्य की भावना ओत-प्रोत है। सो ठीक है, ऐसा होना भी उचित ही है। कारण कि जब इस जीवनी में श्री सिद्धकिशोरी जी का कथानक है तो भाषा में भावों के अनुकूल कोमलतां तथा माधुर्य की झलक भी क्यों न हो? मेरा तो अनुमान है कि साक्षात् श्री जनकनन्दिनी जी श्री लीला स्वरूप के भेष में प्रेमीजनों को कृतार्थ करने के निमित्त इस संसार में पधारीं और फिर अपने निजधाम को अपनी ही इच्छानुसार चली भी गईं। यह कहना भी कुछ अनुचित न होगा कि ऐसे-ऐसे चमत्कारी लीलास्वरूप यदि हमारे

लीलानुकरण समाज में अवतीर्ण होने लगें तब तो भारत का पुनरोद्धार हो जाय, भवसिन्धु में डूबती हुई जनता का बेड़ा पार हो जाय। मैं इस जीवनी के लेखक (भैया श्री लक्ष्मीनिधि जी) को किन शब्दों में धन्यवाद दूँ जिनके अत्यन्त परिश्रम द्वारा इस जीवनी का प्राकट्य हुआ है। इस घोर पापमय कलियुग में यह जीवनी सर्वसाधारण जनता के लिये हितकर एवं सर्व कामनाओं को पूर्ण करने वाली है। मैं अपनी शुभ कामनाओं सहित इस जीवनी का सादर स्वागत करता हुआ पाठकों से भी अनुरोध करूँगा कि वह भी इसका मनन करते हुये अपने जीवन को सफल बनावें। इति शुभम्। द: धर्मभगवान

निकुंज सुख भोक्ता, शृंगार भाव भूषित श्री विदेहजाशरण
जी महाराज, ऋणमोचन घाट, श्री अयोध्या जी का

मानस स्रोत

"यहि तन से तल्लीन ह्वै प्रीति प्रतीत विशेषि।
वहिन चरित भइया लिख्यो, निज नैनन कछु देखि ॥"

श्री जनक लली रघुलाल गुण, लक्ष्मीनिधि कृत नेम।
"प्रेम मोद" गावत सुनत, पावहिं परतम क्षेम ॥

जीवनी नहीं है संजीवनी है जीवन हित, पुरित सुधा से सिद्ध श्रीकिशोरी रस रसते। माधुरी है मोदमय मधुरता की सीम सुभग, पावन परत्व गुण गुंफित क्या लसते ॥ श्रवण मननही है सेवन अनुपान बिन, तोष पोष भावन के भेद भरे ससते। परतम सुप्रेम ही अमरता है रस राज, प्रगट्यो सुभइया के सुभाव ही सुवसते ॥

यह कहते हुये मुझे अपार हर्ष हो रहा है कि श्री भइया जी ने जो यह श्री सिद्धकिशोरी जी का माधुर्य लीलामृतमय चरित्र लिखा है, यह बहुत ही सुन्दर तथा लालित्यमय है। और सर्व साधारण को भावदेश में प्रवेश करने के लिये आचार्यवत् पथ

प्रदर्शक एवं साक्षात् लीलाविहारी श्री प्रिया प्रीतम जू के नित्य विहार में समावेशित कर देने वाला है। जो भी चरितावलियाँ आप ने लिखी हैं सभी अक्षरशः सत्य हैं, जिन लोगों ने इन लीलाओं का अवलोकन किया है उनमें से कई एक पार्षद श्री किशोरी जी के पास पहुँच चुके हैं। तथा जो कुछ लोग वर्तमान हैं वह इन्हीं सब चरित्रों में अनुक्षण निमग्न रहते हुये अवशेष जीवन समाप्ति की बाट जोह रहे हैं। अतः हम सब का परम कर्तव्य है कि इस चरितावली का पठन पाठन तथा मनन कर श्री किशोरी जी के दिव्यधाम को प्राप्त करें। और श्री भइया जी के परिश्रम को भी सफल करके अपने अपने जीवन को भी सफल बनावें। —दः विदेहजाशरण

रसिकशिरोमणि रासरस आवेशी श्री राजकिशोरीवरशरण जी, (परमानन्द), श्री जानकीघाट, श्री अयोध्या जी की

अनुमति

यह परमपूर्व पुण्य का फल है जो श्री बिहौतीभवन के लीला स्वरूप श्री सिद्धकिशोरी जी का शुभ जीवन चरित्र प्रकाशित हो आप सब भावुकों के सम्मुख उपस्थित होने वाला है। श्री सिद्ध किशोरी जी भावुक लीलास्वरूपों में अग्रगण्य और सब में एक उज्ज्वल अनुपम रत्न थीं। आपने अपने दर्शनों एवं अद्भुत चरित्रों के अमृत रसास्वादन द्वारा प्रेमी भक्तों का जितना भी हित तथा उपकार किया है वह यहाँ के किसी लीला प्रेमीजनों से छिपा नहीं है। आपके समस्त चरित्र चमत्कारी तथा परम पावन होने के कारण प्रत्येक प्रेमी समाज के लिये हितकर हुये हैं। लेखक महोदय श्री भइया लक्ष्मीनिधि जी ने बड़े परिश्रम से चरित्रों को खोज खोज कर प्रत्येक चरित्र कुसुमों का सर्व

मन्थन भली भाँति किया है। साथ ही साथ इनकी लेखन शैली भावपूर्ण, बड़ी ही सुन्दर, एवं रोचक भी है। हमें पूर्ण आशा है कि समस्त भावुक प्रेमीजन इस पुनीत चरितामृत का पान कर अपने जीवन को सफल बनाते हुये प्रिय लेखक जी के श्रम को भी सफल करेंगे। कवित्त—

श्री सिद्धकिशोरी के चरित अन्हवैया भैया, सिया श्याम रस गैया प्रीति रीति उमगैया हैं। प्रिया प्रीतम सुहैया सिया गुण गण चुनैया, श्री कृपा पथ बतैया सुजन प्राण सुख दैया हैं। प्रेम परितीत बढ़नोई में दिखैया नैया, सुचिरत सरसैया यही लक्ष्मीनिधि भैया हैं। सिया रति सुनैया लीलास्वरूप रंग रंगैया, बड़भागी कहैया यहि लाहु के लेवैया हैं॥ —राजकिशोरीवर शरण (परमानन्द)

श्रीहरि-गुरु-संत-अनुरागी रायसाहब पं० रुद्रदत्तसिंह जी पर्सनल एसिस्टेन्ट श्री अयोध्याराज की—

राय

प्रिय सज्जनो ! यह जीवनी जो महानुभाव बड़ भागी भक्तानुरागी सिया पद-परागमधुकर श्री रामगोपालदास जी ने (जो अधिकारी स्थान कर्वी-चित्रकूट के हैं) श्री पतित पावनी, जन मन भावनी, करुणासागरी, क्षमा भंडार "श्री सिद्धकिशोरी जी" की रोचक प्रेममयी सरल भाषा में लिखी है। यह केवल जीवनी ही नहीं है वह संजीवनी है जो लेखक ने बड़े परिश्रम से ढूँढ़ २ कर एकत्रित की है। और जो इस कलिकाल के भयंकर सर्प से डसे हुये मृतप्राय जनों के लिये प्राणदा बूटी है। उस संजीवनी बूटी से जिसको अनन्त बलशाली श्री मारुतिनन्दन जी ने कितने परिश्रम से लाकर केवल श्री लखनलाल जी की (जो स्वयं शेषा-वतार लीलाधारी हैं, जिनके एक फण पर यह सारा ब्रह्माण्ड

एक रज के कण के समान विराजमान है, मूर्छा विगत करके जीवित किया था। यद्यपि यह लीलामात्र ही था,परन्तु इस जीवन बूटी के रसास्वादन से कितने अधम कलिमल ग्रसित काम क्रोधादि के कठिन भारों से दबे हुये जो इस जगत् में जीवित रहते हुये भी मृतकसम हैं, प्राण-धन पाकर इस संसार से कलिराज को अँगूठा दिखा भवसागर से बिना प्रयास तर गये और तरेंगे।

श्री सिद्धकिशोरी जी का कुछ परिचय लेखक जी ने इस पुस्तक के अग्रभाग में भी लिखा है। उनकी अगम-महिमा को तथा अनन्त लीलाओं एवं चरित्रों को यह पामर तुच्छ जीव कैसे और क्या कह सकता है। जो लीलायें इस कलिकाल में प्रगट होकर थोड़े ही दिनों में रसिकजनों के विनोदार्थ एवं प्रेमी जनों के हितार्थ दीन दुखिया अधमों के कल्याणार्थ दिखाईं,उनका कोई सहस्र जिह्वा से कणमात्र भी वर्णन करने का साहस नहीं कर सकता। केवल उनके पद्म पद्‌पराग का ध्यान ही इस जीवन के लिये अमूल्य रत्न है। श्री रामगोपालदास जी आप की भावना धन्य है और धन्य है आपका श्री सिद्धकिशोरी जी के कमल-पद में अकथनीय दृढ़ अनुराग! इस पामर को भी अपने स्वर्गीय भ्राता पं० दुर्गादत्तजी रिटायर्ड डिप्टी कलक्टर "रसिकराज" की सेवा में रह कर श्री सिद्धकिशोरी जी की लीलाओं को अवलोकन करने का शुभ अवसर बहुधा मिलता था, और उनका कृपा पात्र कहे जाने का भी इस अधम को गौरव था। यह केवल श्री किशोरी जी की ही दयावाणी की एक किंचितमात्र झलक नहीं थी तो क्या थी? परन्तु इस पर भी यह अधम उनकी अपार दया, क्षमा तथा अनुकम्पा को इस जगद्-व्याधि के चक्करों में पड़ कर भूल गया था। भइया श्री लक्ष्मीनिधि जी की कृपा ने ही मुझ भूले हुये को सद्‌मार्ग पुनः दिखा दिया।

॥ इति शुभम् ॥ पं० रुद्रदत्त सिंह

❀ उपकार एवं धन्यवाद ❀

सज्जनो ! इस संसार में धनी, सुखी रूपवान एवं विद्वान अनेकों पड़े हैं। परन्तु धन्यवाद का पात्र तो वह बड़भागी ही हो सकता है जिसकी वृत्ति प्रभु चरणारविंदों में लगी हो, तथा पारमार्थिक कार्यों में भी जिसकी पूर्ण श्रद्धा एवं लगन हो ! पाठको ! धन को धर्म में लगाने का स्वप्न देखने वाले तो संसार में भले ही बहुत से पुरुष मिलेंगे, परन्तु धन को धर्म में लगाने वाले कोई बिरले माई के लाल एवं भगवत कृपा पात्र ही होंगे। वर्तमान समय में जब कि सब चीजें महँगी हो रही हैं, इस जीवनी का छपना कठिन था। परन्तु सब से हर्ष की बात तो यह है कि पूज्यपाद स्वामी श्री सत्याशरण जी महाराज ने इस शुभ जीवनो को सद्भावना से अपनाने एवं इसको छपवाने के लिये जितना उत्साह दिखलाया है, उसके लिये मैं आप का ऋणी हूँ। आप तो सर्वदा इस कार्य की सफलता के लिये अग्रसर रहे हैं। सर्व प्रथम १२५) रुपया आर्थिक सहायता प्रदान करते हुये आपने अपनी उदारता तथा त्याग का भी पूर्ण परिचय दिया है। आप की सहज सूचना पाते ही ५१) श्री रामसरन जी खन्डेलवाल बुकसेलर चौक कानपुर ने। ११) इनके सुपुत्र श्री कैलाशनाथ जी। ११) इनके मित्र माधोप्रसादजी। ५१) इनके बहनोई श्री दीनानाथ जी। ५१) इनके पिता श्री गोपीनाथ जी द्वारा कौशलपुरी मंदिर के श्री हनुमान जी ने श्री सिद्धकिशोरी जी की जीवनी छपवाने के निमित्त सेवा की है। आप सबका हार्दिक उत्साह प्रेम तथा परिश्रम भी सराहनीय है। १५१) श्रीवैदेही-वल्लभशरण जी गांधीनगर कानपुर। १२५) श्री राधारमनलाल जी अग्रवाल अमीनाबाद लखनऊ। १५१) श्रीमहाराजमाता जी, काशी रामनगर, १५१) पुजारी श्री रामशंकरशरण जी बिहौतीभवन श्री अयोध्या जी, १२५) सेठ हुलासीलाल रामदयाल मार्फत श्री ललिताचरण जी जनरलगंज कानपुर। १०१) सेठ बद्रीदास

सीताराम जी, मोहाटोली कानपुर मार्फत श्री श्रीराम जी। १०१) आँख के डाक्टर पं श्री बनवारीलाल जी कानपुर। २५१) अधिकारी मौनी श्री हरिसेवकदास जी देवराही कुटी, देवरिया। आप सब की आर्थिक सेवा, हृदय का प्रेम, उत्साह, देख कर भारी प्रसन्नता हुई। आप सब प्रेमियों का सहयोग भी प्रशंसा से परे है। ५१) ठाकुर सियाबिहारीशरण जी, सब्जीमंडी कानपुर। ५१) अधिकारी रामगोपालदास (भइया जी)। ५१) श्रीमती श्री चारुशीलाजी बी० ए० मुजफ्फरपुर। ५१) श्री गंगादीन कैलाश नाथ जी बादशाहीनाका कानपुर। ५१) श्री गौरीशंकर जी भट्ट कछियाना कानपुर। ३१) श्री मोहनलाल जी, हलवाई दूकानदार श्री अयोध्या जी। २५) श्रीमती श्री सियादेई जी नौघड़ा कानपुर। २५) श्री रुद्रदत्तसिंहजी राज सदन अयोध्या। २५) रामलालशरण जी खोवाबाजार कानपुर। २१) श्री रामकुमार शरण जी नौघड़ा कानपुर। २१) श्री कमला शरण जी, सब्जी-मंडी कानपुर। २१) श्री डलाराम जी, सब्जीमंडी कानपुर। २१) श्री मंगलीप्रसाद किशोरीशरण जी कलक्टर गंज कानपुर। २१) श्री दरीलाल जी लोकमन मुहाल कानपुर। २१) श्री देवी दयाल जी बरेली। १५) श्री रामजी पैन्शनर तारघर कानपुर। १५) श्री रामचन्द्र जी, देहरादून। इन सबने भी बड़े उत्साह-पूर्वक इसमें भाग लिया है। धन्यवाद !

११) पं० श्री हनुमानदास तिवारी जी प्रयाग। ११) श्री बाबूलाल सियाराम (कर्वी वाले) कानपुर। ११) श्रीमती त्रिवेनीदेवी नारियल बाजार कानपुर। ११) श्री बनवारीलाल त्रिपाठी, घेमऊ। ८) श्रीमती सुभगादेवी कानपुर। ६) श्री आनन्दवन वैश्य, नौघड़ा कानपुर। ५) श्री मधुबनप्रसाद वैश्य, नौघड़ा कानपुर। ५) श्री रामकृपालशरण, हटिया कानपुर। ५) श्री पुरुषोत्तमदास कइया, बादशाहीनाका,

कानपुर। ५) पं० भैयाराम मिश्रा, बादशाही नाका कानपुर। ५) श्री रामगंगा शरण, हि[illegible] पड़ाव कानपुर। ५) श्री बाबूलाल, मोढ़ा टोली, कानपुर। ५) श्री महादेव [illegible] वैश्य, चौक, कानपुर। ५) श्री भानुप्रकाश (जसौरा वाले) कानपुर। ७) फुटकर गुप्त सेवा।

इन सब के नाम भी भुलाये नहीं जा सकते। आप सब का सहयोग भी यथाशक्ति बराबर ही रहा, आप खाली नहीं रहे। कहाँ तक कहा जाय, हार्दिक सहानुभूति से तो कोई वञ्चित रहा ही नहीं, सब किसी ने खुली जबान से 'श्री सिद्धाकिशोरी जी' के चमत्कारी चरित्रों का समर्थन करते हुये इनकी प्रशंसा ही की है, तथा इनकी श्री जीवनी को भी हृदय से ही अपनाया है।— पाठको! यह जीवनी जो बिना किसी मूल्य के आप सब के हाथों में पहुँच गई है, यह केवल इन उपरोक्त भक्तजनों की उदारता एवं दानवीरता का ही फल है। मैं इस शुभकार्य के सम्पादन के उपलक्ष में धन्यवाद देता हुआ भगवान श्री सीताराम जी महाराज से प्रार्थना करता हूँ कि इन समस्त प्रेमी-जनों का यह धार्मिक उत्साह सर्वकाल अमर रहे, तथा अपने श्री चरणों की अटल भक्ति के साथ-साथ ऐसे सुयोग्य प्रेमीजनों को दीर्घायु प्रदान कर धनधाम एवं शरीर से भी सुखी रक्खें।

परम पूज्य स्वामी श्री सत्याशरण जी महाराज एवं पूज्य चरण वेदान्ती श्री रामपदार्थदास जी महाराज के उपकारों को मैं कदापि भूल नहीं सकता, जिन्होंने मुझे समय-समय पर उचित परामर्श देकर इस कार्यक्षेत्र में उत्साह का अंकुर पैदा किया, तथा मेरी थकी हुई चेष्टाओं को शक्ति प्रदान करते रहे हैं। आप मुझ पर परम अनुग्रह करते रहते हैं, मैं आप के अनेक उपकारों के भार से आप का अभिन्न आभारी बन गया हूँ। इसलिये आज मुझे अपने आन्तरिक भावों के प्रगट करने की अभिलाषा उत्पन्न हुई है। श्री वेदान्ती जी महाराज [illegible] को प्रेम

पूर्वक सुना, अति प्रभावित होने के कारण मुझे इस को छपवाने के निमित्त १०००) रु० भी देने लगे। परन्तु मैंने उनसे आर्थिक सहायता न लेकर केवल आशीर्वाद की ही याचना की, जिससे वह कुछ रुष्ट से हो गये ! तब मैंने प्रार्थना की, कि सरकारी छत्र छाया में रहते मेरे राम को ८ वर्ष हो चुके हैं, आप ने मुझे अपना ही अंग मान कर हर प्रकार से मेरा लालन पालन करते हुये अपनी उदारता एवं साधुता का परिचय देकर मुझे स्थानीय समस्त बंधनों से भी मुक्त कर रखा है। केवल भगवद्भजन करने या भगवद् चरित्रों के अवलोकनार्थ ही पूर्ण रूप से स्वतन्त्रता दे रक्खी है। मैं तो आप की इस प्रकार की कृपा से अधिक बोझीला हो गया हूँ जिससे आप के उन उपकारों का बदला चुकाने में असमर्थ हूँ तब आप मुझे भार से दबे हुये को क्यों अधिक दबाकर ऋणी बना रहे हैं। जीवनी चाहे छपे या न छपे, मैं केवल आशीर्वाद छोड़कर आप की इस आर्थिक सहायता को कदापि स्वीकार नहीं करूँगा ! आप की इस प्रकार की शुभभावना एवं स्नेह को देख सुन कर मैं आप को कोटिशः धन्यवाद देता हूँ ! अन्त में मैं आप का तथा श्री स्वामी सत्याशरणजी महाराज का भी नितान्त ऋणी एवं कृतज्ञ हूँ, जिनके आशीर्वादात्मक भावों की सहायता से ही उन अमरात्मा श्री "सिद्धकिशोरी जी" की स्मृति को स्थाई रखने एवं लोकोपकारार्थ इस शुभ जीवनी की स्थापना और पूर्ति हुई। क्यों न हो ? संत ही तो संसार को सत्य मार्ग पर चलाने तथा शान्ति और सच्चा सुख प्रदान करने वाले संसार वृक्ष के अमर फल होते हैं।

पूज्य श्री स्वामी सत्याशरण जी महाराज (श्री चक्रवर्ती जी) से भी मेरी अन्तिम प्रार्थना है कि आप ने इधर ३६ वर्ष से जो कुछ भी मेरे हित और कल्याण के निमित्त करना कराना था

सो तो सब कुछ किया परन्तु अब आप से मेरी याचना है, आप के सामने पल्ला पसार कर केवल यही भिक्षा माँगता हूँ कि अनन्त श्री सीताराम जी के श्री चरणों की भक्ति प्रदान करते हुये आप भी अपने चरणों से इस सेवक को कभी न्यारा न करेंगे ! मैं आप के प्रति अपनी कृतज्ञता के भाव यथार्थ रूप से प्रगट करने में अपने को असमर्थ समझता हूँ, इस लिये हमारा प्रेमी भक्त समाज ही आप की समस्त अनुपम कृपाओं का अनन्त काल तक गुणगान करता रहेगा।

साकेतधामवासी भक्तराज श्री "रामाँ जी" महाराज का भी मैं अति आभारी हूँ और कोटिशः धन्यवाद देता हूँ जिन्होंने भक्तरत्न पुजारी श्री रामशंकरशरण जी महाराज को प्रगट करके (एक नवीन अनुपम श्री राम विवाह-कलेवा उत्सव का प्रचार करते हुये) श्री राम भक्तों के लिये एक अमूल्यनिधि प्रदान करने से भारी उपकार किया, आप श्री दूल्हा सरकार (नौशाबनुआ) के प्रेमीजनों के निमित्त यह सुदृढ़ नाव बनाकर छोड़ गये हैं, जिससे भवपार करते हुये अपने प्यारे प्रीतम के श्री चरणों तक पहुँच जावें। श्री बिहौती समाज के वर्तमान संचालक पुजारी श्री रामशंकरशरण जी महाराज का भी मैं आभारी हूँ। मैं तो इस श्री राम-विवाह-कलेवा उत्सव का भी सादर सप्रेम मान सम्मान करता हूँ कि जिसके द्वारा मुझे सर्व प्रथम श्री चित्रकूट में श्री युगल सरकार श्री सिद्धकिशोरी जी के शुभदर्शन प्राप्त हुये। फिर श्री अयोध्या जी में भी इन्हीं की कृपा व आशीर्वाद द्वारा मेरा श्री सीताराम जी महाराज से एक नवीन दिव्य नाता (बहिन-भइया तथा साले-बहनोई का) दृढ़ होकर मैं परमानन्द को प्राप्त हुआ।

Scanned by CamScanner

श्री विवाह उत्सव की झाँकी-झाँकी का शुभ दर्शन ।

केकि कंठ दुति श्यामल अंगा ।
तड़ित विनिन्दक बसन सुरंगा ।।

शरद विमल विधुवदन सुहावन ।
नयन नवल राजीव लजावन ।।

श्याम शरीर सुभाय सुहावन । शोभा कोटि मनोज लजावन ।।
जावक युत पद कमल सुहाये । मुनिमन मधुप रहत जहँ छाये ।।
पीत पुनीत मनोहर धोती । हरत बालि रवि दामिन जोती ।।
कल किंकिणि कटि सूत्र मनोहर । बाहु विशाल विभूषण सोहर ।।
पीत जनेऊ महाछवि देई । कर मुद्रिका चोरि चित लेई ।।
सोहत ब्याह साज सब साजे । उर आयत सब भूषण राजे ।।
पीत उपरणा काँख जोती । दुहुँ आचरण लगे मणि मोती ।।
नयन कमल कल कुंडल काना । बदन सकल सौंदर्य निधाना
सुन्दर भृकुटि मनोहर नासा । भाल तिलक शुचि रुचिर निवासा ।
सोहत मौर मनोहर माथे । मंगल मय मुक्ता मणि गाथे ।।

निगम नीति कुल रीति करि अर्घ पाँवड़ देत ।
बधुन सहित सुत परिछि सब चलीं लिवाय निकेत ।।

मैं अपने सुपरिचित भक्तवर श्री रामसरन जी खण्डेलवाल एवं उनके पिता भक्तराज श्री गोपीनाथ जी का नाम भी कदापि भूल नहीं सकता, जो कि भगवान श्री सीताराम जी के अनन्य उपासक एवं कट्टर प्रेमी भी हैं। आप ने श्री सिद्धकिशोरी जी की इस जीवनी को आदि से अन्त तक आदरपूर्वक सुनकर अपने प्रेम का पूर्ण परिचय दिया। इस जीवनी के छपवाने में भी आपकी सहायता एवं परिश्रम सराहनीय है। आप दोनों की धार्मिक एवं पारमार्थिक कार्यों में पूरी श्रद्धा रहती है। प्रभु कृपा से आप के घर में कुछ कमी नहीं है। धन, धाम एवं संतान से भी आप परिपूर्ण हैं। क़ानपुर (कौशलपुरी) में आप ने अपना निजी एक बहुमूल्य मकान भी बनयाया है। आपके कुटुम्ब के सभी लोग वैष्णव प्रभुप्रेमी एवं समस्त सात्विक गुण सम्पन्न हैं। श्री रामसरन जी के लिये यह कहते हुये मुझे परम हर्ष होता है, कि आपके पिता जी तो पक्के धर्मनिष्ठ गुरुभक्त एवं भगवतप्रेमी भी हैं। उनके जीवन का अधिक समय सत्संग, प्रभु स्मरण तथा भगवत भागवत सेवा एवं श्री अयोध्या जी के दर्शनार्थ ही व्यतीत होता है। भगवान से मेरी प्रार्थना है कि ऐसे प्रेमी सज्जनों को अपने चरणों की भक्ति के साथ साथ धार्मिक भाव तथा दीर्घ आयु भी प्रदान करें।

संशोधक महोदय पंडित भैयाराम जी मिश्र एम० ए० एल-एल० बी०, अध्यापक श्री गुरुनारायण खत्री कालेज कानपुर, से मैं लगभग ३६ वर्ष से पूर्ण परिचित हूँ। आपके सम्बन्ध में मेरी तो कुछ विशेष लिखने की इच्छा थी, किन्तु आप को रुचिकर नहीं हुआ, इसलिये मैं केवल इतना तो अवश्य लिखूँगा कि आप श्री अयोध्या जी श्रीसद्गुरुसदन निवासी श्री साकेतवासी पूज्य श्री रामवल्लभाशरण जी महाराज के

अनन्य कृपापात्र (शिष्य) हैं। आपकी कितनी अनूठी गुरु भक्ति है, आपका कितना भावुक एवं प्रेमी हृदय है, आप की भगवद्-भक्ति की भावना कितनी प्रबल है मैं इसको कहाँ तक लिखूँ। गृहस्थ आश्रम का पालन करते हुये भी इतना श्रद्धालु, इतनी उच्च कोटि का गुरुभक्त एवं प्रेमी भगवत् भक्त होना क्या कोई साधारण बात है? यह तभी हो सकता है जब कि श्री गुरुदेव की तथा भगवतकृपा होती है। आपका त्याग, परिश्रम, एवं शीलस्नेहयुक्त धार्मिक स्वभाव तो इस बात का सूचक है कि आपने विद्या का परम लाभ इसी जीवन में प्राप्त कर लिया है। अहा! आपका कितना सुन्दर दिव्य जीवन है इसे तो देख सुनकर मुझे भारी प्रसन्नता होती है। इस शुभ जीवनी के संशोधन कार्य में आपने अपने बहुमूल्य समय की आहुति देते हुये जो मुझे सहायता दी है उसके लिये मैं आपका आभारी हूँ।

इसके अतिरिक्त इस महा महिमामयी जीवनी के लिखने में जिन-जिन महानुभावों एवं सज्जन पुरुषों से मुझे श्री सिद्धकिशोरी जी के चरित्रों की प्राप्ति हुई है उनका भी मैं हृदय से परमानुग्रह और उपकार मानता हूँ।

श्री प्रेम रसामृत मूर्ति कृपामय श्री युगल सरकार के चरणार्विन्द मकरन्द की कृपामयी सुमधुर रसधारा सदैव बहती हुई सरस-हृदयों में अधिकार अनुरूप सर, सरिता सागरादि का अनूप रूप धारण करके, हम जैसे माया दग्ध अधम कङ्गाल जीवों को भी रसास्वाद रूप सदावर्त से सदा सन्तुष्ट करती रहे, अनन्त श्री सीताराम जी महाराज से मेरी यही हार्दिक प्रार्थना है।

भइया जी (लेखक)

श्री नवाह पाठ तथा यन्त्र पूजन का
—अपूर्व प्रभाव—

(देखो सम्मति माला नं० १ पेज ३१ ता० २०-६-५५)

श्री भगवान दास जी भट्ट होलसेल क्लाथ मर्चेन्ट्स, नौघड़ा, कानपुर से ता० २६ मई सन् ५५ को लिखते हैं :— श्री मइया जी !

हमारे आत्मज श्रीयुत रामकिशोर शर्मा का विवाह हुए १४ वर्ष व्यतीत हो चुके थे, इतनी अवधि में हमारी आशाओं पर जो तुषारापात हुआ उसका अनुभव भुक्तभोगी ही कर सकता है कारण कि चारों ओर से निराशा ही प्राप्त हो चुकी थी । श्री सिद्धकिशोरी जू की दया से समय के पूर्व ही आप की भविष्य-वाणी कि "कार्य सिद्ध हो गया" से हम आश्चर्य में मग्न हो गये। हमारे लालायित नेत्र किसी मनोवांछित वस्तु के प्राप्त करने को विह्वल थे। आपने "श्री जीवनी" के नवाह पाठ एवं "श्री जू" के चित्रपट की पूजन-विधि का सेवक को जो आदेश दिया था, उसका पालन विधिवत किया गया तो उसके फल-स्वरूप ता० ९ मई को असम्भव सम्भव में और निराशा आशा में परिणित हुई। अपार हर्ष का सागर उमड़ पड़ा, हृदय आनन्द विभोर हो उठा, मन मयूर मंगल गान गाने लगा, हमें पौत्र रत्न प्राप्त हुआ। केवल एक ही नहीं उस के दूसरे वर्ष दूसरा पौत्र रत्न भी प्राप्त हो चुका है। यह तो केवल श्री सिद्धकिशोरी जी की असीम अनुकम्पा का तथा आपकी आशीर्वाद का ही फल है।

सेवक की सहधर्मिणी ५०० "श्री जीवनी" पुस्तकें छपवाने के संकल्प को पूर्ण करने की आज्ञा चाहती हैं। उसके लिए हृदय आपको कोटि-कोटि प्रणाम करता है। हस्ताक्षर भगवानदास भट्ट

❋ धन्यवाद ❋

इस "श्री जीवनी" के द्वितीय संस्करण की १०११ पुस्तकें छपवाने में जिन-जिन दानवीर सज्जनों ने आर्थिक सहायता प्रदान करते हुये अपनी उदारता का परिचय दिया है, वे सब धन्यवाद के पात्र हैं।

७५१) श्रीमती सियादेई जी धर्मपत्नी श्री भगवानदास जी भट्ट, नौघड़ा, कानपुर। १६१) श्रीमान् स्वर्गीय विन्देश्वरी प्रसाद जी शाही, तथा इनके सुपुत्र श्री जी. पी. शाही. S. D. O. हरिपुर पो० वीरपुर (साहरसा)। १०१) श्रीमान् श्यामलाल जी कालड़ा, (पंजाबी) रंगून (बरमा)। ५५) श्रीमती रामकुमारी देवी, विहौती भवन, श्री अयोध्या। ५१) श्रीमती चारुशीला शाही, B.A. सुर्सड-कोठी मुजफ्फरपुर। ५१)श्रीमती विद्यावती मनूचा, जमुनियांबाग, फैजाबाद। ५१) चौधरी रंगलाल जी वकील Vice chairman Distt. Board. धनबाद। ५१) श्री बद्रीदास-सीताराम जी, मोढ़ाटोली, कानपुर। ४१) रायसाहब डा० यदुवीर सिन्हा जी, लहरिया सराय। ३१) महात्मा श्री मस्तरामजी, श्री बृन्दावन। २५) श्री रामसरन जी खंडेलवाल, बुकसेलर, चौक कानपुर। २५) श्री भुवनेश्वरप्रसाद जी M.A. प्रोफेसर, लाल दरवाजा, मुंगेर। २५) श्री रामकिशोरशरण शर्मा, नौघड़ा, कानपुर। २५) श्री राधाकृष्ण जी ठाकुर, Boiler Inspector Bihar, धनबाद। २५) श्री रामगोपालजी, शुतरखाना, कानपुर। २५) श्री राधाकृष्ण जी, मेहरोत्रा खत्री, फैजाबाद। ११) श्री परमेश्वरीप्रसाद जी S.D.O. दरभंगा। ११) श्री बाबू हरिश्चन्द्र जी, पटना। ११) श्री बाँकेबिहारी जी माथुर, लखनऊ। ११) श्री रामस्वरूप जी शुक्ल, औरैया। ११) श्री रामद्वारका शरण जी, बाराबंकी। १०) श्री श्रीम[illegible]ण जी माथुर, लखनऊ।

१०) श्री डाक्टर लछमन प्रसाद जी, बरेली। १०) श्री शिवराज प्रसाद शरण जी, कानपुर। १०) श्री रामवल्लभशरणजी, इटावा। १०) श्री नोमत प्रसाद शरणजी, कानपुर। ७) श्री राधाकृष्ण जी बाजपेई, कानपुर। ६) श्री रामस्वरूप जी झा, कानपुर। ६) श्री रामानन्द जी सरस्वती, फर्रुखाबाद। ५) श्री हरिबाबू जी, लहरिया सराय। ५) श्री सूर्यनारायण जी मुख्तार, लहरिया सराय। ५) श्री बृजकिशोर नारायण जी, भागलपुर। ५) श्री श्यामबिहारी शुक्ल, औरैया। ५) श्री रघुवरदयाल शिवराम तिवारी, औरैया। ५) घासीराम त्रिलोकीनाथ, औरैया। ५) श्री श्यामलाल, श्री गोविन्द औरैया। ५) श्री हेमेन्द्रनाथ गोविल, कानपुर।

नोट— (१) "श्री जीवनी" छपवाने के लिये कुछ सज्जनों ने २६१) रुपये की गुप्त सेवा भी की है, इन सब को कोटिशः धन्यवाद है।

(२) मुझे यह लिखते हुये परम हर्ष होता है कि श्री राजाराम जी "बादल" कीर्तन काव्य कला विशारद, श्री हरि मंडल, नवगाँव छावनी, (म० प्र०) ने अपने हृदय मानस से अद्भुत तथा भावपूर्ण "श्री सिद्धकिशोरी चालीसा" का निर्माण कर डाला, जिसके द्वारा प्रेमीजनों को भारी लाभ एवं आनन्द प्राप्त होगा। इस शुभ कार्य के सम्पादन के लिये आप कोटिशः धन्यवाद के पात्र हैं।

(३) "श्री सिद्धकिशोरी चालीसा" प्रथम बार ११११ श्री अयोध्या जी में, द्वितीय बार २१११ लहरिया सराय में रायसाहब डा० यदुवीर सिन्हाजी ने और तृतीय बार भी २१११ पटना के श्री ओमप्रकाश जी अग्र[illegible]ल तथा कानपुर के श्री रामसरन जी बुकसेलर ने प्रेमीजनों के कल्याणार्थ अपने ही व्यय से छपवाया। आप भी सब धर्मवीर कोटिशः धन्यवाद के पात्र हैं।

Scanned by CamScanner

(४) श्री त्रिभुवननाथ जी गोविल M.A., L.L.B., Excise Inspector कानपुर तथा इनके सुपुत्र श्री हेमेन्द्रनाथ का भी मैं आभारी हूँ, जिन्होंने इस श्री जीवनी के प्रूफ संशोधन कार्य में भारी सहायता दी है। आपका परिश्रम अति सराहनीय है।

❀ आवश्यक सूचना ❀

(१) जिन प्रेमी जनों को किसी भी शुभकामनार्थ 'श्रीजीवनी' के नवाह पाठ करने की अभिलाषा हो, सर्वप्रथम उन्हें सम्पूर्ण जीवनी का पाठ करके अपनी सम्मति (opinion) भेजते हुये यह भी लिखना होगा, कि किस कार्य सिद्धि के लिये आप नवाह पाठ करना चाहते हैं, तबही नवाह पाठ विधि आपको भेजी जायगी।

(२) नये प्रेमीजनों को पत्रउत्तर के लिये जवाबी पत्र, तथा "श्री जीवनी" मँगवाने के लिये पार्सल खर्चा भेजना होगा।

(३) सम्मति माला नं० १ व २ वितरण हो चुकी हैं। नं० ३ शीघ्र छपने वाली है।

श्री राम जी   भइया जी   श्री मिठ्ठकिशोरी जी

Scanned by CamScanner

श्रीमहंत श्री मिठ्ठकिशोरी जी

श्री राम जी भइया जी श्री मिथिलाकिशोरी जी
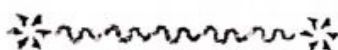
अनन्त श्री मिथिलाकिशोरी जी

(2)

श्रीमते रामानन्दाचार्याय नमः　　　　श्री सद्गुरु चरणकमलेभ्यो नमः

श्री
सीतारामचन्द्राभ्यां नमः
श्री सिद्धकिशोरीदयै नमः
श्री हनुमते नमः

❀ श्री सिद्धकिशोरी चरितामृत सागर ❀
(श्री सिद्धकिशोरी जी का जीवनचरित्र)

"वहु विधि सुमनों से संचित मधु किया इसे अपना लेना
हंस रूप गुण पय पीकर अवगुण नीर बहा देना"

प्रिय सज्जनो ! इस असार संसार में कभी ऐसा भी आपत-विपत का समय आता है जब कि मनुष्य का चित्त भवसागर की तरल तरंगों से टकराकर एवं संसार की विषम वेदनाओं से ऊबकर चारों तरफ से हताश हो जाता है और उनके सभी साधन, सहायक तथा प्रयोग विफल होकर समस्त शक्तियाँ भी कुंठित हो जाती हैं; अर्थात् जीव जब अपनी शक्ति से निराश होकर भटकते-भटकते थक जाता है तब उसके मन में किसी सार वस्तु के समझने की जिज्ञासा उत्पन्न होती है और उसके समझने के लिये वह लालायित होता है। उस समय उसको प्रभु शक्ति प्रदान करते हुये यह प्रेरणा करते हैं कि साहस मत छोड़ो, धीरज को धारण करो, एवं उत्साह से काम लो—तब वह "निर्बल के

बल श्रीराम" की शक्ति को पाकर उस अदृश्य शक्ति की शरण लेने एवं सहायता प्राप्त करने के निमित्त छटपटाता है. उसको संसारी वस्तुयें प्रिय नहीं लगतीं, उसका मन भी चंचल, चिंतित एवं व्याकुल रहता है, रात दिन उसी उधेड़-बुन में लगे रहने और सोच-विचार करने के बाद उसका हृदय सत्य-सनातन सर्वेश्वर भगवान की तरफ झुकता है और वह अपनी आर्तनाद द्वारा भगवान को पुकारने भी लगता है। ऐसी आर्तनाद का समय-समय पर प्रतिफल यह प्राप्त होता है कि उसका परलोक एवं परमेश्वर में श्रद्धा एवं विश्वास उत्पन्न होने लगता है जहाँ अटूट श्रद्धा तथा अटल विश्वास हुआ तबतो एक ज़बर्दस्त तूफान उसके हृदय में लहरें मारने लगता है और वह उसकी खोज करने को चल देता है।

बहुत लोगों का कथन है कि उसका पूरा-पूरा पता किसी को नहीं मिला और जिनको मिला भी वह लौट कर वापस नहीं आये परन्तु भगवान के भावुक अनुभवी संतों एवं भक्तों का कथन है कि उसका पता पाकर दिव्यानन्द की प्राप्ति होने पर इस मृत्यु लोक में वापस आने का किसी का भी जी नहीं चाहता। इस सृष्टि के आरम्भ काल से आज तक न जाने कितने ही तत्वद्रष्टा भगवान एवं उनके धाम की खोज में चले, कितने तो तलाश करते-करते वहाँ तक पहुँच गये, कितने बीच में ही अटक गये, कितने कष्ट देखकर हिम्मत हार गये, उनके हौसले पस्त हो गये अर्थात् उत्साह भंग हो गया इसलिये भाग खड़े हुये और न मालूम कितने भावुक भक्तजन अब भी उस प्रभु के एवं उनके दिव्यधाम की खोज में व्यग्र हैं।

❀ रँगीली झाँकी ❀

अच्छा तो जरा श्री भगवान एवं उनके निकुञ्जजनों की रँगीली झाँकी का अवलोकन तो करलें। देखिये :—

अत्यन्त मधुर एवं ठण्डे प्रकाश की चाँदनी छिटक रही है। इस सलोने तेज में श्री सरकार की मधुर मुसकान की छटा अलग ही छा रही है। सरकार के सिर पर मुकुट है। मुकुट में जटित अमूल्य रत्न मणि-मोतियों का रंग-बिरंगा प्रकाश अपना अलग ही ज्योतिमण्डल बना रहा है। काले-काले घुँघराले महीन और चिकने केशपाश कपोलों पर लटक कर भक्तजनों के नेत्र एवं मन को नागपाश में बाँध रहे हैं! अनन्त एवं विस्तृत ललाट पर केसर की खौर एवं तिलक ऐसे जान पड़ते हैं मानों चन्द्रमण्डल पर मंगल और बृहस्पति दोनों का संयोग हो गया हो। आपका मुखड़ा क्या है मानों समस्त सुन्दरता का समुद्र है। अनुग्रह की वर्षा करती हुई भौंहें, प्रेमामृत बिखेरते हुये रतनारे विशाल ललित लोचन, नीलम के दर्पण के समान स्वच्छ कपोल जिनमें मकराकृत कुण्डल के प्रतिबिम्ब पड़ रहे हैं एवं अनुराग की लाली उभर रही है इतने सुन्दर हैं कि उनकी उपमा ही नहीं मिलती। शुक की चोंच के समान नासिका, पके हुये बिम्बफल के समान अधर जिनके दर्शन मात्र से देह की सुध-बुध भूल जाती है और जो कि अनारदानों के समान सुन्दर सुडौल दंतपंक्ति को परदे में छिपाये रखते हैं। सुन्दर चिबुक, कम्बुकंठ हृष्ट-पुष्ट कंधे, विशाल भुजदंड, लाल-लाल हथेलियाँ, बड़ी-बड़ी कोमल अँगुलियाँ, उभरे और लाल-लाल नख, कर कमल में पीतकमल, ऊँचा और चौड़ा वक्षस्थल, गम्भीर नाभि, सुन्दर उदर, कंठ में कौस्तुभमणि, वक्ष-स्थल पर नीलम के समान मुक्तामाला, कन्धे पर पीताम्बर, सिंह

Scanned by CamScanner

की कटि के समान कटि है। ऊँची एड़ी, सुडौल पंजे, यव, कमल, अंकुशादि चरण चिन्ह वाले लाल-लाल तलवे जिनमें यावक (महावर) लगा हुआ है। उभरे हुये लाल-लाल नख जिनके दर्शनों से भक्तों के हृदय का अन्धकार दूर भाग जाता है और जिनमें सन्तों के मन भौंरों के समान रहते हैं; ऐसे चरणारविन्दों का वर्णन तो मुझसे हो ही नहीं सकता। मीठे बोल, सुन्दर चितवन, हृदय को लुभाने चित्त को चुराने और मन को हरने वाली मंद-मंद मृदु मुस्कान से आप अपने भक्तजनों के हृदय की जलन को दलन किया करते हैं।

भगवान के श्रेष्ठ समीपी भक्त ही शृंगार के समय बाजूबंद अँगूठी कंकण नूपुर के रूप में समय २ पर भगवान के अंगस्पर्श का सुख लिया करते हैं। कभी धनुषबाण ही बन जाते हैं तो कभी पार्षद हो कर भगवान की सेवा और सुविधा के अनुरूप ही वह अपने अपने रूप बना लेते हैं।

* दिव्यधाम साकेत लोक *

यह तो प्रभु एवं उनके भक्तों की इच्छा का बना हुआ दिव्य चिन्मय लोक है, वहाँ उनके संकल्प ही मूर्तिमान होकर प्रेमाकृत लीला करते हैं। वहाँ तो एक ही समय में सारे समय, एक ही स्थान में सारे स्थान, और एक ही वस्तु में सारी वस्तुयें रहती हैं। वहाँ संसार का कोई भी नियम लागू नहीं होता, न जन्म, न मरण, न जवानी, न बुढ़ापा, न सूर्य, न चन्द्र, न स्त्री, न पुरुष, न सृष्टि, न प्रलय, न काम-क्रोधादि विकार, न शोक, न मोह, न बंधन, न मुक्ति इत्यादि सर्व द्वन्द्वों से रहित है। वहाँ तो सब कुछ भगवान ही हैं सब भगवनमय है सब उन्हीं का संकल्प और सब उन्हीं की लीला है। वहाँ अज्ञान न होने से ज्ञान भी नहीं है, राग न होने के कारण वैराग्य भी नहीं है। वहाँ तो केवल प्रेम है,

सेवा है, विलास है श्री युगलसरकार पियाप्रीतमजू के परस्पर हास-विलास, बोलन-चलन, चितवन-खेलन और मुस्कान की माधुरी कण-कण से बरसती रहती है। बस यही त्रिपाद् विभूति है, यही साकेत धाम है।

भगवान के इस धाम में जड़-चेतन, छोटे-बड़े, ऊँच-नीच का कोई भेद नहीं है। वहाँ तो सब के सब चिन्मय हैं, सब भगवत कथा को सुनते हैं। जिसे देखो वही भगवत कथा एवं कीर्तन का प्यासा घूम रहा है।

* प्रेमा-भक्ति *

जिनकी भावना निर्मल है और विश्वास अटल है ऐसे प्रेमी भक्त अपने प्यारे प्रभु को खोज कर प्रेमपाश में बाँध आकर्षण कर ही लेते हैं। देखिये! भगवान का वचन भी है कि:—

हूँ स्वतन्त्र सबसों परे-पर भक्तन आधीन।
भक्तहेतु लीला करत-यह खेल मेरो प्राचीन ॥ १ ॥
भक्तों के हित कारण ही-बहु रूप बनाया करता हूँ,
साकेत धाम के सुख छोड़े-पृथ्वी पर आया करता हूँ ॥२ ॥

सज्जनो! भगवान का वचन है कि जो प्रेमीजन अपना घरद्वार, स्त्री-पुत्र परिवार एवं मन की समस्त वासनाओं का परित्याग कर केवल मेरा ही भजन, मेरा ही ध्यान और मेरा ही चिन्तवन करते हैं तब भला मैं उनको कैसे भूल सकता हूँ। मेरा तो सहज ही स्वभाव है कि जो कोई मुझे जिस भावना से भजे मैं भी उसको उसी प्रकार से भजता हूँ, कारण कि :—

भाव का भूखा हूँ मैं-औ भाव ही बस सार है,
भाव से मुझको भजे तो, उसका बेड़ा पार है।
अन्न धन औ वस्त्र भूषण कुछ न मुझको चाहिए,
आप ही हो जाये मेरा पूर्ण यह सत्कार है।

भाव बिन सब कुछ भी दे डाले तो मैं लेता नहीं,
भाव से एक फूल भी दे तो मुझे स्वीकार है।
भाव बिन सूनी पुकारें मैं कभी सुनता नहीं,
भाव पूरित टेर ही करती मुझे लाचार है।
जो मुझ ही में भाव रखकर लेते हैं मेरी शरण,
उनके और मेरे हृदय का एक रहता तार है।
भाव जिस जन में नहीं उसकी मुझे चिन्ता नहीं,
भाव वाले भक्त का भरपूर मुझ पर भार है।
बाँध लेते हैं मुझे यों भक्त दृढ़ जंजीर में,
इस लिये इस भूमि पर होता मेरा अवतार है।

देखा सज्जनो ! निराकार अपने आप साकार यहाँ हुआ-
ले आइना के अक्स को नमूदार यहीं हुआ।

भगवान का कथन है कि मेरा भक्त जिस समय संसार को भूल कर मुझे आर्तनाद द्वारा पुकारता है तब तो मुझसे रहा नहीं जाता। उस समय मुझे अपने नित्य धाम साकेत को छोड़ कर भक्तों के भाव भरे हृदय में रहना ही अति प्रिय लगता है। मेरा भक्त जब खड़ा कीर्तन करता है तब मैं वहाँ नृत्य करता हूँ, भक्त जब चलता है तो मैं भी उसके पीछे-पीछे चला करता हूँ, मेरा भक्त जब थक जाता है तब तो मैं उसके हृदय में पुनीत प्रेमानन्द की धारा बहा कर उसकी थकावट को दूर कर देता हूँ। मेरा भक्त जब प्रेम में मगन हो रोने लगता है तब मैं अपने पीताम्बर की छोर से उसके आँसू को पोंछता हूँ, और उसके प्रेम मग्न हो कर अति विकल हो जाने पर मीठे-मीठे वचन सुनाकर उसको धैर्य बँधाता हूँ। मेरा प्रिय भक्त जिस समय मेरे बिछोह में धैर्य को छोड़ कर अधीर हो जाता है तब तो मैं उसको अपनी गोदी में बिठला कर पुचकारता हूँ, मुख चूमता

Scanned by CamScanner

हूँ यहाँ तक कि स्नेह पूर्वक उसको अपने गले से भी लगा लेता हूँ।

संसार में प्रेम करने वालों से प्रेम करना यह तो स्वाभाविक धर्म है ही, परन्तु मैं तो अपने से वैर करने वालों पर भी अनुकम्पा ही किया करता हूँ। तब मैं अपने उन भक्तों को भला कैसे भूल सकता हूँ जो निरन्तर मेरे ही आश्रित रहते हुए प्रेम भाव से सतत मेरा ही स्मरण भजन एवं पूजन किया करते हैं ? यही कारण है कि मुझे ऐसे भक्तों के आधीन हो जाना पड़ता है। एवं उनकी रुचि के अनुसार मुझे वैसा करना भी पड़ता है। फिर वह जैसे भी नाच नचावें मुझे नाचना भी पड़ता है। मैं उनका बन जाता हूँ और वह मेरे बन जाते हैं। मैं उनको निर्भय बना देता हूँ। वह मेरी दिव्य विभूति के हक़दार बन जाते हैं। मेरा दृढ़ व्रत यह भी है कि यदि कोई प्रेमी भक्त मुझे खरीदना चाहे तो मैं उनके हाथ बिना दामों के बिक भी जाता हूँ। मैं तो केवल प्रेम का भूखा हूँ। बिना प्रेम के कोई कितनी बातें गढ़-गढ़ के मुख से कहे मुझे पुकारे अथवा मेरी प्रार्थना करे तो भी मैं नहीं सुनता। और यदि प्रेम भाव से मेरा भक्त मुझे एक बार भी पुकारे तो मैं सब काम छोड़ दौड़ा-दौड़ा तुरन्त उसके समीप जाता हूँ और उसकी रक्षा करने के निमित्त आतुर हो उठता हूँ। जैसे चन्दन में शीतलता, अग्नि में उष्णता एवं दिव्य खाद्यपदार्थों में स्वाद और गुण स्वभावतः विद्यमान हैं, उसी प्रकार भक्तों की रक्षा करना भी मेरा सहज ही स्वभाव समझो। मेरे भक्तों से वैर विरोध कर मेरा पांव पूजने वाले मुझे कभी प्यारे नहीं लगते, और न ही वे मेरी प्राप्ति कर सकते हैं। जो मेरे भक्तों से शत्रुता रखता है वह मेरा शत्रु है, वह मेरी कितनी भी ठाठ बाट से पूजा प्रतिष्ठा करे मैं उसे कभी स्वीकार नहीं करता। वास्तव में अगर सच पूछो तो भक्त मेरे लिए हैं और मैं भक्तों के लिए हूँ।

भक्तों का मैं प्राण हूँ तो भक्त मेरे प्राण हैं, और यदि मैं भक्तों की शान हूँ तो भक्त मेरी शान हैं। देखिये, मेरे अनुराग में रँगे हुए, उमंग से फूले हुए, रस रंग में डूबे हुए भक्ति भंग के नशे में झूमते हुए, मेरे भक्तराज कितने प्यारे एवं भोले भाले होते हैं। अपने एक-एक भक्त के एक-एक भाव पर मैं तो लाख २ बार न्योछावर जाऊँ, देखता ही रहूँ। अहा! कैसी प्यारी झाँकी है। चित्त को मेरे चरणों में लगाए हुए, नेत्रों से प्रेमाश्रु बरसाते हुए, रस भरी रसना से मेरे गुण गाते हुए ये मेरे भक्तराज हैं। क्या अनोखी अदा है। कभी लाज छोड़ कर नाचते हैं तो कभी आँख मींच कर सावधान हो बैठ जाते हैं, कभी हँसते, कभी रोते, कभी पुकारते तो कभी मौन ही हो जाते हैं। कभी चलते फिरते हैं तो कभी अचल भी हो जाते हैं।

ये लाज को छोड़ कर, सबसे मुँह मोड़ कर, जग का नाता तोड़ कर, आँख से आँख जोड़ कर, मुझे भी प्रेम प्रदेश में कभी लिटा रहे हैं तो कभी बिठा रहे हैं। ये मेरे पूर्ण प्रताप को जानकर भी अनजान हैं। भोले बालक की तरह भक्ति रानी की गोद में बैठ कर मचल रहे हैं। मेरे लिए ललक रहे हैं। अपने कोमल हृदय का स्पर्श देकर मुझे सुखी कर रहे हैं। इनके-मन में नया रंग है, नई उमंग है, लालसा है, अभिलाषा है। वह किस के लिए? केवल मेरी ही प्रीति के लिए, सुख के लिए, कुशलता एवं सेवा के लिए। यह जब दर्द भरे दिल से गद्गद् कंठ से मेरे दुख के दिनों के गीत गा-गा कर व्याकुल होते हैं तब तो मैं भी आश्चर्यचकित हो जाया करता हूँ। इसके स्मरण मात्र से इनको जितना दुख होता है उसके अनुभव काल में भी मुझे उतना दुख नहीं हुआ। ओहो! मुझसे इनकी इतनी प्रीति! यह तो प्रेम की ठठेरी मठेरी गली में घूम रहे हैं। मेरे सुख मय समय को देखकर हर्ष से फूल उठते हैं, खिल-खिला उठते

हैं। वे लाभ छोड़कर अगाध अनुराग की नदी में डूब कर नाचते हैं और मुझे हिंडोले में बैठाकर रंगा रंगी झोंका देते हैं एवं मस्ती में आकर मेरे गुणों का गान करते हैं।

"छिपी वह कहाँ मधुर मुस्कान"

कभी मुझे मिश्री दूध भोग लगाते हैं, तो कभी दही भात भी खिलाते हैं, कभी माखन मिश्री चटाते हैं तो कभी-कभी दही-चूरा भी चबवाते हैं। अहा! ऐसे प्रेमी भक्तों की चरणरज से तो अमित भुवन पवित्र होते हैं। मेरी प्यारी भक्ति महारानी के भोले भाले बच्चे जैसे प्यारे लगते हैं वैसे तो मेरी नाभिकमल से उत्पन्न ब्रह्मा जी भी नहीं, औढरदानी शंकर भी इतने सुखकर नहीं हैं, और तो क्या कहूँ सदा सुखरूप सहज आनन्दस्वरूप मेरी आत्मा भी भक्तों के बराबर प्यारी नहीं लगती। मीठी-मीठी बोली वाले विरह लीला से व्यथित एवं वेसुध प्राण वाली प्रीतिफंद में फँसे हुए भक्तजन ही मुझे प्यारे से प्यारे लगते हैं।

सज्जनो! ध्यान की सच्ची कुञ्जी प्रीति ही तो है। हृदय की जितनी एकाग्रता, पवित्रता एवं प्रियता बढ़ने लगती है उतना ही उतना वह युगल स्वरूप के विहार, लीला, विलास एवं सरस चित्त को आकर्षित करने लगता है? प्रेम में स्वाद है परन्तु भोग नहीं। सुख हो या दुःख स्नेह की लौ तो जलती ही रहती है। इसमें दर्द है पर आह नहीं। प्रियतम के लाड़ लड़ाने में ही प्रेम की महिमा है। प्रेम में तो देह गेह की सुध भूल जाती है। सच्चे प्रेमी के लिए तो प्रेम ही काम एवं प्रेम ही भोजन है, तथा प्रेम-संगीत में ही प्रेमी मग्न रहता है। निरंतर प्रियतम की सेवा में सावधान होकर जैसे भी हो उन्हें सुख पहुँचाना यही प्रेम का मुख्य स्वरूप है। प्रेमी तो उस प्रेम आनन्द का भी तिरस्कार कर देता है जो उसके प्रीतम की सेवा में बाधा डाले।

सज्जनो ! प्रेमी भगत तो !

"रमते रहते हैं सदा, देखते लीला प्रीतम की,
कल कहीं आज कहीं, प्रात कहीं रात कहीं।"

एक समय श्री किशोरी जू ने भगवान श्रीरामचन्द्र जी महाराज से प्रश्न किया कि "भगवन्! आपका ध्यान तो चराचर जगत करता है फिर समाधि लगाकर आप किसका ध्यान किया करते हैं ? आपसे श्रेष्ठ तो संसार में कोई है ही नहीं, फिर किसके भजन-चिन्तन में आप मग्न रहा करते हैं ?"

भगवान ने उत्तर दिया—"हे प्रिये मेरे भी कुछ भजनीय हैं। मेरे भक्त मुझे जिस भाव से भजते हैं, ठीक उसी भाव से मैं भी अपने उन भक्तों का भजन-स्मरण किया करता हूँ। जब भक्तजन मेरा ध्यान करते हैं तब तो मैं भी उनका ध्यान करता हूँ। यदि भक्त मुझे अपना इष्ट मानते हैं, तो मैं भी उन्हें अपना इष्ट मान कर उनके चरणों की रज (धूलि) की लालच से उनके पीछे-पीछे घूमा करता हूँ। हे प्रिये! मैं तो इस समय अपने एक महान भाग्यशाली प्रिय भक्त ही का ध्यान करते हुये उनसे मानसिक बातें भी कर रहा था।"

देखा सज्जनो ! सभी लोगों को संसार में अपना प्रेमी अत्यन्त प्यारा होता है। अपने प्रेमी की प्रसन्नता के लिये संसार के प्रिय से प्रिय पदार्थों के परित्याग के अनेकों उदाहरण मौजूद हैं। जब संसारी पुरुष ही अपने प्रेमियों को इतना प्यार करते हैं तो प्रभु अपने प्रेमी भक्तों को कितना चाहते होंगे यह कहने की बात नहीं ? देखिये ! भक्तों के पीछे तो भगवान अपने आपको भी भूल जाते हैं। और मेरे भक्तों का किसी प्रकार गुणगान हो यही उनकी आन्तरिक लालसा बनी रहती है। अतः भगवान को प्रसन्न करने का सरल उपाय यही है कि उनके भक्तों की पूजा स्तुति

करें। उनके चारु चरित्रों को ही सदा श्रवण करें, एवं भक्तों की ही यशरूपी मणिमाला सदा कंठ में धारण किये रहें। भगवान की महिमा भक्तों द्वारा ही है, इसलिये भक्तों की कथा ही भगवन कथा है। भक्तों के हाड़ मांस का तो वर्णन किया नहीं जाता उनकी भक्ति की ही महिमा गायी जाती है। भगवान में उनका कितना अटूट स्नेह था, एवं भगवान भी उनके समस्त कार्यों को स्वयं अपने हाथों से जिस प्रकार करते रहते थे, यही भक्तों की गाथायें हैं।

भगवनभक्त त्रैलोक्य पावन क्यों हुये ?

इसलिये कि उन्होंने अपनी अनुपम भक्ति के द्वारा भगवान को अपने आधीन बना लिया। देखिये अर्जुन ने भगवान को बिना दाम के ही मोल लेकर उनको अपना सेवक और सारथी भी बना लिया था और भक्तवत्सल भगवान भी कितने प्रेम से उत्साहपूर्वक उनके सारथी के काम को बिना किसी संकोच के निभाते रहे। भगवत्प्रेम और भक्ति में कोई अन्तर नहीं है। दोनों में गम्भीरतम सम्बन्ध है। भक्ति स्वतन्त्र और सर्व सुखों की जड़ है। जैसे सूरज अन्धकार का शत्रु है, उसी प्रकार भक्ति भी माया की शत्रु है। मनुष्य जीवन का परम एवं चरम लक्ष्य, उसका एकमात्र उद्देश्य भगवत्प्राप्ति है। हृदयरूपी शीशा धोने के लिये भक्तिरूपी जल की आवश्यकता है। जब हृदय शुद्ध हो गया, कालिमा धुल गई, तभी तो भगवान का दर्शन प्राप्त होगा।

भगवान को जब अपने कलेजे में अपना दिल नहीं मिलता तब वह उसे ढूँढ़ते हुये अपने प्रिय भक्त के पास आते हैं और उसको अचेत से सचेत करते हैं तथा भीतर से बाहर निकाल कर दर्शन भी देते हैं। असल बात यह है कि जब भक्त अपने को साधनहीन देख अपनी विवशता से तड़फड़ाने लगता है, तब

कहीं उसके हृदय की धड़कन बन्द न हो जाय यह सोचकर भगवान अपना बाना उतार देते हैं अर्थात अपने प्रिय भक्त को दर्शन दे देते हैं। भगवान अपने भक्त को कभी नहीं छोड़ते। उसके अविरल प्रेम एवं भक्ति के वशीभूत होकर स्वयं उसके संग-संग रहकर उसको भी अपने ही पास रखते हैं। भगवान में सर्वोत्तम भाव से मन लगाने का नाम ही तो भक्ति है। भक्ति, भक्त, भगवान एवं गुरु की महिमा का कोई पार नहीं पा सकता। भगवद् भक्ति चारों पदार्थों (अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष) को देने वाली है। विश्व का कल्याण (परोपकार) करना भी प्रभु भक्ति ही समझी जाती है।

अहा ! भगवतभक्ति भी क्या ही विलक्षण वस्तु है। भगवान् को वश में करने के लिये केवल प्रेम और भक्ति की ही आवश्यकता है। स्वयं साक्षात भगवान को भी जब कभी आधीन होना पड़ा है तो केवल भक्तों के प्रेम एवं भक्ति से ही। सार असार का जानना ज्ञान है। असार को छोड़ना वैराग्य है, एवं सार का हाथ लग जाना भक्ति है। वैराग्य और ज्ञान यह भी दोनों भक्ति के संरक्षक, वर्द्धक एवं सहायक हैं। जब तक स्नेह (प्रेम) का बीज ही नहीं होगा तो भक्ति का वृक्ष भला कैसे उत्पन्न हो सकता है ? इस भक्ति महारानी की साधना से बिकराल माया के चक्कर में पड़े जीव छुटकारा पाकर सद्गति को भी प्राप्त कर लेते हैं। इसमें किसी जाति और वर्ण का भेद भाव नहीं है। श्रद्धावान स्त्री, पुरुष, ब्राह्मण, शूद्र कोई भी क्यों न हो सभी भगवत्भक्ति के अधिकारी हो सकते हैं। किन्तु अश्रद्धालु एवं अपात्र में यह ज्ञान और भक्ति ठहर नहीं सकते। जैसे कि सिंहनी का दूध सोने के पात्र बिना रह नहीं सकता। दूसरे पात्र में रखने से पात्र फटकर दूध भी धरती पर गिर जायगा।

भगवान की भक्ति करके उसके बदले में कुछ याचना करना भक्ति को मानों बेचना है। ऐसी भक्ति वास्तव में भगवान की निष्काम भक्ति नहीं कहलाती, यह तो हुई सकाम भक्ति ! और बदला चाहने से स्नेह भी दूषित हो जाता है।

भगवान की भक्ति तो अनादिकाल से चली आती है। संसार में ऐसे ऐसे भक्त भी हुए जिनके पास न तो राज था और न कोष ही परन्तु केवल इस भक्ति के प्रताप से ही उन्होंने भगवान को बस में करके खिलौना बना लिया, और परम स्वतन्त्र भगवान को उनके हाथों बेदाम बिकना भी पड़ा। मेरा यह कथन केवल कल्पना की भीति पर आधार नहीं रखता, बल्कि इसमें कई प्रमाण उपस्थित किए जा सकते हैं। कारण कि मैंने इतिहासों के पन्ने उलटने में अपने बहुमूल्य समय की आहुति दी है। तभी तो भगवत्भक्ति की अनादिकता सिद्ध हुई, जिसे मैं यहाँ लिख रहा हूँ।

भगवान को इस भक्ति द्वारा प्राप्त करने एवं प्रसन्न करने के निमित्त यह सहज उपाय निरापद एवं परम श्रेय का मार्ग है। यदि मनुष्य के हृदय में भक्ति का भाव विद्यमान हो, तो फिर चाहे दूसरे साधन न भी हों, तो भी केवल एक भक्ति द्वारा कर्म ही वैराग्य, ज्ञान तथा मोक्ष तीनों स्वयं ही सिद्ध हो जाते हैं। जरा देखिये तो :—

(१) भक्त अम्बरीष जी के इतिहास को। महान त्यागी तपोधन महर्षि दुर्वासा जी के घोर क्रोध करने पर भी एक सद्-गृहस्थ राजा अम्बरीष ने इस भगवत्भक्ति के कारण ही उनपर विजय प्राप्त की।

(२) श्री द्रौपदी जी का चरित्र। यह हमें शिक्षा देता है कि वह असहाय अबला समझ कर भरी सभा में नग्न की जा रही थी।

भगवत्भक्ति के कारण से ही उसकी सर्व प्रकार रक्षा हुई, एवं अन्यायी और अत्याचारी असुर समाज का मान भंग हुआ।

(३) सपत्नीक श्री विदुर जी महाराज का चरित्र हमें यह बतलाता है कि महा अभिमान के कारण दुर्योधन के बहु-मूल्य मेवा आदि भोज्य पदार्थों को परित्याग करके, विदुरजी के नीरस केले के छिलकों में भक्ति के ही कारण, भगवान को मेवा आदि पदार्थों से भी विशेष रस का स्वाद एवं आनन्द मिला था।

(४) श्री ध्रुव भक्तजी अपनी सौतेली माँ के वचनों से दुखी होकर तप करने लगे थे। इस का फलित अर्थ यह है कि अकाम अथवा सकाम भक्ति भी श्री ध्रुवजी के समान इस लोक से परमपद तक की प्राप्ति करा सकती है।

(५) अहर्निश धर्म पर कुठाराघात करने वाला दुर्दण्ड अत्याचारी दैत्यराज अनेकानेक षडयंत्रों से भगवत्भक्त एवं भक्त समाज को पीसना ही अपना ध्येय समझने वाला तथा इन्द्र यमादिकों का शासक होता हुआ भी अपनी समस्त शक्ति लगा कर भक्त श्री प्रहलाद जी का बाल तक भी बाँका न कर सका। आहा! प्रहलाद जी की सहनशीलता एवं क्षमा भी विशेष सराहनीय हैं।

(६) श्री हनुमान जी महाराज की भक्ति का तो क्या कहना जिन्होंने सब प्रकार से भगवान के कैंकर्य सेवा के लिये प्राकृतिक एवं दिव्य समस्त वैभव तथा ब्रह्मलोकादि के सुखों पर लात मारकर, अकिंचन भाव से अनन्य भक्ति के द्वारा केवल साक्षात भगवान श्री रामचन्द्र जी महाराज को ही नहीं, किन्तु उनके समस्त परिवार को भी अपना ऋणी बना लिया।

(७) आहा सज्जनो ! जरा देखिये तो अनन्त **श्री भरत जी** महाराज की भक्ति और प्रेम भाव को, जिन्होंने भगवान श्री रामचन्द्र महाराज जी की चरणपादुकाओं के पूजनादि को भी भगवान के समान ही सन्मानित किया है। उनकी इस प्रकार की अविरल अनुपम भक्ति का क्या कहना है। आहा ! धन्य हो ! श्री भरत जी महाराज की इस भक्ति की महिमा के विषय में सज्जनो मेरे पास शब्द ही नहीं हैं, जो मैं यहाँ लिख सकूँ।

पाठको ! भक्ति की कहीं दूकान नहीं खुलती। यह तो एक अनमोल रत्न है जो कि अधिकारी ग्राहकों को ही भगवत-भागवत की कृपा से मिल सकता है। जिसके हृदय में भगवतभक्ति एवं प्रेम उत्पन्न हो जाता है, उसे तो फिर संसार की कोई भी वस्तु आकर्षित नहीं कर सकती और न ही माया उसको अपने चंगुल में फँसा सकती है। सिवाय अपने प्रीतम के चिन्तवन के उसके पास दूसरा काम ही नहीं रह जाता। वह कभी रोता है, और कभी हंसता भी है, कभी गाता है, तो कभी नृत्य भी करने लग जाता है, यहाँ तक कि उसे अपने शरीर तक की सुधि-बुधि भी भूल जाती है। भगवान के प्रेमी भक्तों का विचित्र खेल है। उनके हृदयगत भावों को समझना मनुष्य के लिये अति कठिन है।

"दुनिया कहती है प्रेमी को पागल और दीवाना,
भगवान मुग्ध होते हैं स्वयं जहाँ झूम रहा मस्ताना।"

आहा ! यह तुच्छ जीव जो कि माया के क्षुद्र सुखों के लिये हाय-हाय करता हुआ हैरान और परेशान रहता है, वही प्रभु की भक्ति के प्रभाव से अखिल ब्रह्माण्डनायक राजराजेश्वर प्रभु के निकट तक पहुँचने का अधिकारी बन जाता है, और भगवान का एक प्यारा खिलौना बनकर उनकी छाती से लगकर केलि करने लगता है। भगवान उसको अपनाते हैं, उसके साथ खेलते हैं, और फिर उसको अपने से पृथक कदापि नहीं करते।

भगवान की समस्त लीलायें रसमयी एवं भावमयी होती हैं, जिनके श्रवण मात्र से ही मनुष्य संसार सागर से बात की बात में पार हो जाता है। वह वाणी का विषय नहीं। जिन भक्तों का चित्त भगवान के चरण कमलों में भ्रमर की भाँति रसास्वादन में मुग्ध हो गया है, उन महान पुरुषों को किसी से बोलने तक का अवकाश भी कहाँ रह जाता है। और जिन भक्तों के हृदय में जब श्री सीताराम जी रम गये तो कामदेव भी भग जाते हैं और जब कामदेव आते हैं तो श्री सीताराम जी भी रमते राम हो जाते हैं। सज्जनों! कामदेव का कथन है कि जो कोई भगवत्भक्त निरन्तर भगवत्भजन तथा कैंकर्य में लगा रहता है, तो उससे मैं बोलता भी नहीं हूँ। श्री भगवान के गुण अनन्त हैं। एक-एक गुण की अनन्त-अनन्त शाखायें हैं। जब भगवान स्वयं किसी के हृदय में आकर विराजमान हो जाते हैं, तब उसके सभी गुण एवं उनकी समस्त शाखा-प्रशाखा प्रेमी भक्त के हृदय में भी आ जाती हैं एवं समय-समय पर उपयोगिता के अनुसार उनका प्राकट्य भी होता रहता है। इसीलिए तो भक्तों के गुणों की गणना करना भी कठिन है। जैसे समुद्र की एक बूँद भी उसके खारीपन के गुण को प्रकट कर देती है, अमृत का एक कण भी अमर कर ही देता है, गंगाजल का एक छींटा भी पवित्र करने के लिए पर्याप्त है, वैसे ही यहाँ भी भगवत, भागवत के गुणों को समझो।

जिन पर भगवान की कृपा हो जाय तो उनको अपनाना उनके लिये आश्चर्य और असम्भव ही क्या है ? विश्वासपूर्वक निष्कपट भगवान तथा भक्तों की सेवा ही भक्ति है। साफ दिल के आइने में श्रद्धा का मसाला लगाने से हृदय में ईश्वर भक्ति बढ़ने लगती है, तभी तो भगवान की झलक दिखाई पड़ती है। इसलिए भगवान की भक्ति ही समस्त सद्गुणों की जननी, धात्री है। मुक्त

पुरुष भी लीला से शरीर स्वीकार करके भक्ति का स्वाद और आनन्द लेते हैं। ब्रह्म भाव की प्राप्ति हो जाने पर ही भक्ति मिलती है, और भक्ति की प्राप्ति से रसिकजन भानु कुल भानु परम आह्लाद मूर्ति भगवान श्रीरामचन्द्र जी महाराज के समीप पहुँच जाते हैं।

देखिये ! शास्त्रों में प्रारब्ध को अमिट बताया है। परन्तु अनुभवी महात्माओं का कथन है कि भक्तों का प्रारब्ध मिट जाता है। प्रारब्ध तो केवल कर्म दृष्टि से है और ज्ञान दृष्टि से शरीर। पूर्व जन्म और उत्तर जन्म यह सब प्रतीत मात्र है। केवल ब्रह्म ही ब्रह्म सत्य है। भक्त की दृष्टि से सब अपने प्यारे प्रभु की लीला है। वह कर्म के आधीन नहीं है, कर्म जिसके आधीन है वह कर्ता जीव भी तो उन्हीं के आधीन है, इसलिये वह चाहे जैसी भी लीला करें सब उन्हीं का तो खेल (स्वाँग) है और सब कुछ वही हैं। इसलिये न भक्त का प्रारब्ध है न उसका भोग।

सज्जनो ! भगवान के श्रद्धालु भावुक भक्त का तो कभी नाश नहीं होता, कारण जो उनकी शरण हो गया, उनके आश्रित हो गया तब उसका नाश कहाँ ?

देखिये ! चक्की में डाले हुए सब अनाज पिस जाते हैं, परन्तु चक्की में जो दाने लकड़ी की खूँटी (कीली) के शरण हो जाते हैं वह अवश्य पिसने से बच ही तो जाते हैं।

प्रभु के समीप सब भक्त बराबर हैं, उनके समीप कोई छोटा बड़ा नहीं। प्रभु सबको एक दृष्टि से देखते हैं। उनकी नजर इतनी बड़ी है कि उनको कोई चीज छोटी नहीं बल्कि बड़ी ही नजर आती है ! परन्तु रसिकजनों ने यह मर्यादा बाँध रक्खी है कि सकाम तो छोटा एवं निष्काम बड़ा भक्त होता है। अर्थात् सकाम बेटे का दोस्त तथा निष्काम बाप का मित्र। और बहुत सोच समझ लेने के बाद अन्तिम यह विचार पक्का किया गया कि यह असमर्थ जीव कादर और कमजोर दिल है। दुख में इसे कोई न

कोई पुकारने की जगह (सकाम भक्ति) भी जरूर चाहिये, अगर इसके सभी रास्ते बन्द हो गये तो यह निष्कामभक्ति मार्ग पर चल ही न सकेगा। इसीलिये धीरे धीरे जब इसका प्यार प्रियतम में गाढ़ा हो जायगा, इसे कोई दूसरी इच्छा भी न रहेगी फिर तो यह स्वयं ही पूर्ण निष्कामभक्त बन जायगा, एवं सब कुछ अपने प्रियतम के लिये ही चाहेगा। इसीलिये भक्त न होने से सकाम भगवतभक्त होना भी अच्छा ही है।

जिनके हृदय में भगवतप्राप्ति की उत्कण्ठा जाग्रत होती है गाँव, महल, कुल, परिवार, सगे सम्बन्धी, इष्ट मित्र, मान प्रतिष्ठा, यश आदि आदि कुछ भी इनके मार्ग में अड़चन नहीं डाल सकते। जैसे कि श्रीगंगाजी मार्ग के पहाड़ी चट्टानों एवं खँडहरों को चीरती-फाड़ती समुद्र में जा मिलती हैं, वैसे ही भगवतभक्त भी सब विघ्न बाधाओं को पार करके अपने लक्ष्य स्थान पर पहुँच जाते हैं।

भगवान तो स्वच्छन्द लीला बिहारी हैं। जब जिस भक्त के साथ जैसी मौज हुई लीला कर डाली। वह अपने भक्त को कभी लँगोटी बाबा के रूप में देख के ख़ुश होते हैं, तो कभी स्वामी के रूप में; कभी राजकुमार के भेष में देख मग्न होते हैं, तो कभी हँसते-खेलते देखकर ख़ुश और प्रसन्न होते हैं। और कभी-कभी तो रोते-गाते और नाचते देखकर ही आनन्दित हुआ करते हैं। जैसे गऊ अपने मैल लगे हुए बच्चे को चाटती है, जी भर दूध पिलाती है और हर समय उसकी रक्षा करती है, वैसे ही भगवान भी अपने मैले-कुचैले प्रेमी भक्तों के अपराधों को अपना भोग बना लेते हैं, एवं अपने सम्बन्ध में की हुई उनकी प्रत्येक लालसा को भी पूर्ण कर देते हैं। इसके अतिरिक्त जैसे बानरी अपने बच्चे को हृदय से लगाये रहती है, वैसे ही प्रभु भी अपने

प्रेमीजनों को अपनी गोदी में रखते हैं। और जिस प्रकार बिल्ली अपने बच्चे को मुख में लेकर सुरक्षित स्थान में पहुँचाती है, उसी प्रकार भक्तों की इच्छा न होने पर भी भगवान उन्हें दुख से बचा कर उन्हें सुख पहुँचाते हैं। सज्जनो! जीव जब तक व्याकुल होकर ईश्वर अथवा उनके भक्तों के चरित्रों में डुबकी नहीं लगाता, तब तक ईश्वर के घर में झाँकी नहीं कर सकता। ईश्वर की व्याकुलता अनायास ही संसार को भी छुड़ा देती है, तब यह मन प्रियतम के पास हर दम रहने लगता है, और अन्तर के रस में निरन्तर डूबे रहने के कारण इनके नेम प्रेम के नशे में ऐसे चूर रहते हैं कि वह क्षण भर के लिए भी उस प्रेम रसामृत महासागर से बाहर निकलना पसन्द नहीं करता, यहाँ तक कि उसका तन, मन, प्राण, आत्मा सब प्रेम रंग में रँग जाते हैं. और प्रेम की आँच से पापरूपी बर्फ के पहाड़ पिघल कर आँसुओं के रूप में बह निकलते हैं! प्रेम का चुम्बक तो उसके विकाररूपी कीलों तक को उखाड़ देता है। जैसे दूध से निकला हुआ मक्खन जल के ऊपर निर्लेप रहता है! वैसे ही भक्तजन भी संसार में संसार से निर्लेप रहकर भगवान की याद किया करते हैं। अभिमान और विकार यह दोनों उन्नति के मार्ग के कण्टक हैं, यही रुकावट डालकर जीव को भगवान से विमुख कर देते हैं। श्रद्धा और सेवा इन दोनों रोगों की रामबाण औषधि हैं। भगवतभक्ति एक अमूल्य निधि गुप्त रखने की वस्तु है। परन्तु इसे गुप्त कब रखा जा सकता है, जब तक अपनी याद हो, मगर जिस समय भक्त के हृदय-समुद्र में भावावेश का ज्वार आता है, तब उसकी लहरें अपने आप ही उछल-उछल कर तट भूमि को प्लावित करने लगती हैं। यह भी भगवान की एक मौज तथा मनोरंजन है। 'यदि भक्तों के द्वारा भगवान अपनी भक्ति सुधा सीकर की वर्षा न करते, उसके

प्रेम प्याले को कभी-कभी छलका न देते तो जगत में फँसे हुये जीवों को भक्ति रस के नमूने का भी पता न चलता। भक्ति के आनन्द में भक्त का हृदय कहीं फट न जाय इसके लिये भी उस का बाहर प्रवाहित होना जरूरी होता है, इसका स्वयं भगवान ध्यान रखते हैं।

भगवान तो संसार में अपने भक्तों का अपने सेवकों का यश फैलाना एवं उनको गौरव प्रदान करना ही चाहते हैं। जो भक्त अटल रहते हैं मोहब्बत की खाक में वह दाखिल हो जाते हैं, श्री राम की जाते-पाक में मिल जाते हैं। मोहब्बत और जंग में तो हर चीज रवा है।

Everything is fair in love and war.

भगवान सबके संग रहते हुये भी निर्लेप कहलाते हैं। ऐसे भगवान को विचारी अबलायें एकान्त में घुल घुलकर बातें करते हुये देख करके मन में समझती थीं कि भगवान अब हमारे ही वश में हैं। यथार्थ में अगर देखा जाय तो केवल भक्तों को छोड़कर भगवान किसी के वश में आने वाले नहीं हैं। हाँ भक्त जन जैसे चाहें भगवान को नचा भी सकते हैं। शेष सब जीवों को तो भगवान जैसे मदारी बन्दरों को नचाता है वैसे ही मायारूपी रस्सी में बाँधकर नित्यप्रति नचा ही रहे हैं। भगवान कब क्या और क्यों करते हैं ? यह कहना तो श्री शेष जी से भी शेष रह जाता है। वेद भी नेति-नेति कहकर असमर्थता प्रकट करते हैं। इसलिये भगवान की ऐसी क्रीड़ा का रहस्य हर कोई समझ नहीं सकता ! भगवान तो प्रेम के भूखे हैं न कि धन-धाम के। देखिये ! चुल्लू भर गंगाजल से ही श्री गंगा जी को जल पिलाने से क्या उनकी प्यास बुझ सकती है ? और क्या विश्व के प्रकाशक भगवान को एक क्षुद्र दीपक प्रकाशित कर सकता है ?

कदापि नहीं ! किन्तु हम अपनी भक्ति को भी तो किसी प्रकार प्रकाशित करें। इसलिये भक्तजन सम्पूर्ण सामग्री के स्वामी सर्वथा परिपूर्ण ब्रह्म भगवान के लिये फल फूल तथा अन्य प्रकार के और भी कुछ उपहार भेंट करते हुए अपनी भक्ति को दरशाया करते हैं। सच्चे प्रेम एवं रामभक्ति के बिना मानव हृदय हृदय नहीं है, बल्कि वज्रवत कठोर पाषाण है। जिस हृदय में प्रेम है वही मनुष्य जीवित समझो। और जिसके हृदय में प्रेम नहीं, वही मृतक समान है !

भगवान में अनन्य प्रेम का होना ही भक्ति है। भक्ति में आयु, द्रव्य, रूप का तो कुछ भी मोल नहीं। विद्या, धन, जाति, बल यह भी मुख्य नहीं है। भगवान तो केवल प्रेम को देखते हैं, प्रेम से ही सन्तुष्ट होते हैं गुणों से नहीं। बतलाइये तो ! व्याध का कौन सा अच्छा आचरण था ? ध्रुव की उम्र ही क्या थी ? गजेन्द्र के पास कौन सी विद्या थी ? विदुर की कौन सी उत्तम जाति थी ? यादवपति उग्रसेन का कौन सा पुरुषार्थ था ? कुब्जा का कौन सा सुन्दर रूप था ? सुदामा के पास कौन सा धन था ? भक्तप्रिय भक्तवत्सल भगवान तो केवल भक्ति से ही प्रसन्न होते हैं। इसलिये प्रेममय नित्य अविनाशी, विज्ञानानन्दघन सर्वशक्तिमान सर्वव्यापी ईश्वर की भक्ति करने का सब मनुष्यों को अधिकार है।

हिन्दुओं के लिये तो भगवान की सच्ची भक्ति और सच्चा प्रेम ही सर्वश्रेष्ठ है। जब तक उन्होंने भगवान की भक्ति की उनके घरों में लक्ष्मी का निवास रहा और जब से भक्ति का नाता तोड़ा, भगवान से मुख मोड़ा, तब से पड़ा कर्म का कोड़ा ! पामाल हो गये और सब कुछ लुट गया।

"Love is God ❋ प्रेम ❋ God is love"

प्राणीमात्र पर प्रेम करना प्रभुप्रेम करना है। विश्व की कुछ भी सहायता न करना एवं किसी की श्रद्धा को ठुकरा देना वस्तुत: प्रेम नहीं है। और वह भी सच्चा प्रेमी नहीं है, जिसने अपने प्रीतम प्यारे की याद में नैनों को तर करके अपने प्यारे के चरणकमलों को नहीं पखारा। प्रेम में तो ऐसी मधुरता एवं मिठास है कि ऐसी मधुरता अमृत में भी नहीं है और इसमें शक्ति ऐसी है कि त्रिलोकीनाथ भगवान को भी बन्धन में बाँध ले। इसके समान संसार में ऐसा कोई शक्तिशाली पदार्थ ही नहीं है। भगवतप्रेम का दर्जा सबसे ऊँचा है, इसके सामने मुक्ति की मिठास भी फीकी ही पड़ जाती है। परन्तु "खानपान सुख चाहत अपनें-तिन्हें प्रेम परसत नहीं सपने"। सज्जनो ! प्रेमफल कितना स्वादु, कितना मधुर है, इससे जो चित्त को प्रसन्नता होती है वह कहने की बात नहीं, वह तो अनुभव करने की वस्तु है। आज तक संसार का कोई भी मीमांसक ढाई अक्षर "प्रेम" की मीमांसा में सफल नहीं हुआ। प्रेम के ग्रन्थों में भी प्रेमियों के लिये कोई धारा नहीं है।

"There is no law for the lovers."

प्रेम तो नियम की सुदृढ़ भीति को तोड़ फोड़ कर अपने प्राणप्रियतम के चारुचरणों का चुम्बन कर लेता है। प्यारे की उस नगरी तक पहुँचाने वाला प्रेम ही एक राजमार्ग है, एवं समस्त साधनों का शिरोमणि है। देखिये बृज की अबलाओं के निर्मल प्रेम ने श्री उद्धव जी के प्रबल प्रचण्ड ज्ञान को किस प्रकार पछाड़ दिया, कि उनके मँहगे तत्वज्ञान को किसी ने

मूली के पत्तों के भाव भी मोल न खरीदा! इसलिए अगाध तत्वज्ञान में निमग्न महात्मा श्री उद्धव जी को परास्त होकर लाचार प्रेम विश्व-विद्यालय से "प्रेमी" की डिग्री प्राप्त करनी पड़ी।

सज्जनो! प्रेम कुछ सौदा तो है नहीं कि पैसा फेंका और तुरन्त बाजार से खरीद लाये। जब भगवत कृपा होती है और अनेक योनियों में भ्रमण करते हुये सुयोगवश जीव भगवान की ओर उन्हीं की प्रेरणा से बढ़े और उन्हीं में मन लगाकर उन्हीं के चिन्तवन स्मरण में अपना सब समय बितावे तभी ऐसे उत्कट प्रेम की उपलब्धि होती है। इसीलिये।

"प्राण जाय मगर श्रीराम नाम भूलो नहीं!
दुख में कभी तड़पो नहीं सुख में फूलो नहीं॥"

सबको प्रतिदिन व प्रतिक्षण का यह अनुभव है कि जिनसे हमारा कोई संसारी नाता होता है उनसे कितना मोह व कितनी ममता होती है एवं उसका कितना स्मरण चिन्तन भी होता है! इस-लिए जो लोग प्रियतम से भी कोई नाता निश्चित कर अपने आप को उनके भरोसे पर छोड़ देते हैं तब भला वह हताश कैसे हो सकते हैं? उनकी रक्षा के निमित्त तो भगवान सदा तत्पर रहते हैं और हर प्रकार से उनका योगक्षेम भी करते हैं! परन्तु होना चाहिए दृढ़विश्वासी! कारण कि आत्मशक्ति एवं आत्मविश्वास के सामने कुछ भी असम्भव नहीं; विश्वास से मनुष्य निर्भय तथा निश्चिंत हो जाता है, एवं विश्वास की कमी से ही उस सच्ची स्थिति से मनुष्य को वंचित रहना पड़ता है। संसारी लोगों में किया हुआ मोह तो संसारी बन्धनों को दृढ़ करता है जब कि वही मोह भगवत सम्बन्ध से भगवान और भक्तों की स्मृति या वस्तु में किया जाय तो उससे भगवत

स्नेह बढ़ता है। प्रभु का प्यार रग-रग में भर जाने से सहज ही में ईश्वरता तो भूल जाती है, अपनपौ हो जाने के कारण प्रेम बढ़ने लगता है, यह रसिक पुरुषों की प्रेमगली है। देखिये एक फकीर कहता है! "चलरे दिल यार की गली में रो आवें, कुछ तो दिल का गुबार धो आवें।" कारण कि विरहाग्नि से मन का मल जल कर जहाँ दिल हल्का हुआ—तब पापों का भी प्रायश्चित समझो! प्रेमी के हृदय में जब विरह की ज्योति जागती है, दिल का दिया जलने लगता है, तब उसके लिये अपने प्रियतम प्रभु का नाम, रूप, लीला, धाम यही चारों उसके जीवन के आश्रय होते हैं, इन्हीं के सहारे विरही जीता है, इन्हीं का वर्णन, श्रवण, स्मरण करता है, गुनगुनाता है इन्हीं में, डूबता उतराता है इन्हीं में। बाहर भी यही भीतर भी यही। इसी भाव ही में तन्मय रहता है, और उसके हृदय का प्याला प्रेम से लबालब भर कर आँखों के रास्ते छलक उठता है। श्री लीलाबिहारी भगवान के प्यारे भक्तजन तो विषयसुख, साधनसुख, एवं ब्रह्मसुख तक का भी तिरस्कार करते हुये निरन्तर सत्संग से ही आनन्द लेते हैं। कारण कि :—

"कोटि जन्म के पुण्य जब, उदय होत एक संग,
छूटत मन की मलिनता-भावत तब सत्संग"!

"प्रभु मेरे हैं और मैं प्रभु का हूँ" यह सहज ममता रूपी पान का बीड़ा चबा कर चित्तरूपी अधरों को लाल करते रहते हैं। ज्ञानी अपने को देखता है, और प्रेमी भक्त अपने प्रियतम को देखते हैं, और अपने हृदय-मन्दिर में प्रीति के पलंग पर, सत्य की सेज बिछा कर, श्री गुरु मंत्र मणि-दीप जगा कर, सर्वदा के लिये अविद्या का अन्धकार मिटा कर, सदा अपने को बिछुड़ा हुआ समझ कर, कातर हृदय से प्रियतम के मधुर नाम की पुकार आठों पहर अनुराग में मस्त रहकर भगवान के सामने विनय

प्रार्थना करते हुये नेत्रों से अश्रुओं की धारा बहाते रहते हैं। अहा! करुणा के समान शान्तिमयी इस अश्रुधारा में स्नान करने का सौभाग्य जिसे मिल जाता है, वह तो सदा के लिये शोक-संताप से छुटकारा पा जाता है। अपना प्रेमास्पद चिर-काल में जब कहीं से आता है तो हृदय में हर्ष की एक बाढ़ सी आ जाती है। चित्त चाहता है कि उसे आँखों से पी जायें, मन में आता है कि रास्ते में अपनी पलकों के पाँवड़े बिछा दें, जिस पर प्रियतम के पाद-पद्म पड़ें। उस समय एक विचित्र दशा होती है। अहा! भगवान का रूप भी क्या है मानो समस्त सुन्दरता का समुद्र है। रूप तो उसी को कहते हैं जो छिन२ में नवीन ही नवीन दिखाई दे, एवं सौन्दर्य माधुर्य्य प्रतिपल बढ़ता ही प्रतीत हो। यह समस्त शोभा तो भगवान ही में है। भगवान का मुख ही भक्तों का सर्वस्व है। इन्हीं के दर्शनों के लिये असंख्यों जन्म योग, जप-तप किये जाते हैं। अहा! जरा देखो तो उस प्यारे की कैसी मंद-मंद मुस्कान है कि जादूभरी मृदुमुस्कान ही अपने भक्तजनों के हृदय की जलन को दलन करती हुई आनन्द का स्रोत बहाती है। उनके स्वभाव को तो वही जान सकता है जिसने उनका शुभ दर्शन किया हो। जिसने एक बार भी उनकी झलक निहार ली उसे तो जगत फीका और निस्सार दिखाई देने लगता है। नेत्रों के कटाक्ष तो घायल ही कर देते हैं। इन्हें अमृत के कुण्ड एवं आनन्द के स्रोत समझो। यह तो माधुरी के सागर, अनियारे प्यारे तथा सुख के सदन हैं। सुन्दर चन्दन की खौर कितनी अनुपम है। कारी-कारी चिकनी घुँघरारी लटें कपोलों का स्पर्श करती हुई काली नागिनियों के छोटे-छोटे बच्चों के समान टेढ़ी मेढ़ी होकर विष के स्थान में अमृत का वमन कर रहीं हैं। मीठे बोल, सुन्दर चितवन, चित्त को चुराने वाली मुख की शोभा का तो क्या कहना? दर्शन करने मात्र से देह की सुध-बुध तक भूल

जाती है, मानों जादू का काम करती है। उन अपने प्रिय बहनोई श्री रामजी महाराज के चरणारविन्दों का वर्णन भला उनके साले लक्ष्मीनिधि से क्या हो सकता है, जिन जावकयुत लाल-लाल श्रीचरणों में सन्तों के मन भँवरों के समान रसामृत का पान करते रहते हैं। उस प्यारे प्रीतम की रूपमाधुरी के पान करने में जिनके नेत्र रत हो गये उनके भाग्य का तो कहना ही क्या ? संसार का समस्त सौन्दर्य्य भगवान के अखिल सौन्दर्य्य राशि का एक कणमात्र है ! भला एक बिन्दु सिन्धु को कैसे भिगो सकता है ? एक कण मिश्री क्षीर सागर को मधुर बनाने में कैसे समर्थ हो सकती है ? इसी प्रकार यह सांसारिक सौन्दर्य्य भी भगवान को किस प्रकार से मोहित कर सकता है ? किसी प्रकार से नहीं, वह तो सदा निर्लेप हैं।

प्रेम तो एक ऐसा अद्भुत रस है कि इसे जितना भी शील संकोच के साथ जितना ही एकान्त से एकान्त में पान किया जाय उतना ही अधिक स्वादिष्ट प्रतीत होगा। शील संकोच से इसकी मधुरता अति अधिक बढ़ जाती है। यद्यपि प्रेम प्रकट करने की वस्तु नहीं है, यह गोपनीय है, फिर भी यह प्राणी इतना अधूरा है कि वह अपने हृदय के भावों को रोक नहीं सकता एवं गुप्त प्रेम के वर्णन करने को विवश हो जाता है। "ग़लत है कि दिल का लगाना बुरा है, मोहब्बत का लेकिन जताना बुरा है !" दुनिया में सबसे जबरदस्त ताक़त जो मनुष्य को सचाई के साँचे में ढालकर उसके गंदे एवं बुरे ख्यालात को ज़लाकर भस्म कर दे वह है "प्रेम" ! भगवत् प्रेम की मस्ती अजब तरह का नशा है जिसका खुमार कभी न उतर कर प्रतिदिन बढ़ता ही रहे, इसलिये क्षणिक प्रेम के तरंग वाले को प्रेमी नहीं कहा जा सकता है। प्रेम और मोह में तो आकाश पाताल का अन्तर है। मोह तो हाड़ मौंस की दीवार पर निर्भर है। हाड़ मौंस के सूखते ही

उसमें परिवर्तन होकर नष्ट हो जाता है, मगर प्रेम सर्वथा इससे भिन्न है, प्रेम स्थाई है, एवं शान्ति की सृष्टि करता है तथा इसके वियोग में भी प्रेमी की आसक्ति बढ़ती ही जाया करती है। "जो आवे तो जावे नहीं, जावे तो आवे नहीं !" "अकथ कहानी प्रेम की समझ लेउ मन माहिं।" जहाँ प्रकृति का खेल है वहाँ पर तो विकार है। प्रेम तो विकारशून्य है। एवं सांसारिक प्रेम में इतना अन्तर है कि उसके कारणरूप का नाश होते ही उसका प्रेम भी नष्ट होकर उसका आगामी जीवन भी शून्य सा प्रतीत होने लगता है।

प्रभु के लाड़ले संत कहाँ नहीं हैं। वह तो सर्वत्र आनन्द सिन्धु में ही मग्न रहते हैं, उनके हृदय में नित्य नवीन अपूर्व प्रेम भरी लहरें लहराया करती हैं, और इस प्रेमसिन्धु की प्रेम कुंज में प्रवेश करते ही उनके प्रेम की धारा बहने लगती है।

वह कुंज क्या जिसमें मनोहर फूल ही खिलते न हों,
वह फूल क्या जिसमें मधुप मधु के लिये मिलते न हों।
वह भृंग क्या जिनको रसिकजन आत्म गुरु कहते न हों,
वह रसिक क्या जिनके हृदय में प्रेमनद बहते न हों।
"जो भरा नहीं है भावों से बहती जिसमें रसधार नहीं !
वह हृदय नहीं है पत्थर है-जिसमें सियावर का प्यार नहीं"

हर दिल है हमवयि मुहब्बत-हर एक सर में है सौदाये मुहब्बत !
यह सच है कौन है फर्ज़ानाये इश्क और कहाँ पाबन्द है दीवानाये इश्क।

यहाँ भेद जात पाँत का नारी न नर का है,
हरी को जो प्रेम करके भजे-सो ही हरी का है

"Love can supply all wants."
"We cannot compel love and we cannot

make it a Law"
"Lovers ever run before the clock"
दिल हो उन्हें मुबारक, जो दिल को ढूंढ़ते हैं।
हम तो दिल से हाथ धो कर, दिलवर को ढूंढ़ते हैं।।
जब मिट गई हो हस्ती, खो जाय दिल तो क्या ग़म।
उल्फ़त पर मिटने वाले, कब दिल को ढूंढ़ते हैं।।

— :❀: —

❀ श्री सद्गुरु महिमा ❀

— :❀: —

जिज्ञासु का परम कर्त्तव्य है कि सर्वप्रथम सद्गुरु की शरण में जाकर उनकी सेवा से हृदयरूपी खेत को शुद्ध करे, तब सद्गुरु कृपा करके नामरूप बीज देंगे। वह शुद्ध हृदय में ही धीरे-धीरे प्रवेश करेगा। जैसे बीज मिट्टी में मिल कर एवं पानी के मेल से उग कर फूलता और गुलजार होता है, अर्थात् बीज जब तक अपने आप को खोकर धूल में नहीं मिलाता तब तक अँकुरित होकर न तो फूलता है और न ही फलता है। इसी प्रकार मनुष्य जब तक अपने आप को सच्चे गुरुदेव के आत्म-समर्पण नहीं करता तब तक न तो वह जन्म-मरण के बन्धन से छूट सकता है, और न ही किसी श्रेष्ठ पद का अधिकारी ही बन सकता है। सच्चे जिज्ञासु को ही सच्चे गुरु की प्राप्ति होती है। गुरु और भगवान में कोई अन्तर नहीं। जैसे भगवान सर्वव्यापक हैं वैसे ही गुरुतत्व भी सर्वव्यापक है। जब हृदय में परमार्थ की प्रबल जिज्ञासा होती है तब सर्व अन्तर्यामी गुरु स्वयं ही अधिकारी समझ कर उसके सम्मुख प्रकट होते हैं, और उसके समस्त संशयों का छेदन कर देते हैं।

"गुरु की कृपा होत ही, मिटत सकल भवफन्द।
भवफन्दन के छूटते, उपजत परमानन्द ॥"

योग्य गुरु कभी अपात्र को उपदेश नहीं करते क्योंकि अपात्र को दिया हुआ उपदेश उसी प्रकार व्यर्थ हो जाता है, जैसे तांबे के पात्र में रख देने से दही और भस्म में किया हुआ हवन, तथा कड़वी लौकी के बनाये हुए साग में डाला हुआ घी मसाला व्यर्थ जाता है। अनाधिकारी के सम्मुख कोई महत्वपूर्ण उपदेश एवं कथा भी नहीं कहते, क्योंकि वह समझते हैं कि ऊसर खेत में बीज बोना व्यर्थ ही नहीं है, बल्कि समय और शक्ति का दुरुपयोग भी करना है! इसलिये अनाधिकारी के सम्मुख ज्ञान को प्रकट न करना, बिना पूछे भी न कहना, कारण कि बिना पूछे कहने से बात का महत्व चला जाता है। जैसी योग्यता हो उतना ही ज्ञान प्रकट करना। अगर अधिक प्रकट किया गया तो वह उसे पूर्णरीति से ग्रहण करने में असमर्थ होगा, और यदि अधिकारी की योग्यता से न्यून ज्ञान दिया तो उसे संतोष न होगा। इसीलिये जिज्ञासु एवं शिष्य का अधिकार समझ कर ही गुरु या वक्ता उसे उपदेश करते हैं। हीन श्रेणी के शिष्य को उच्च श्रेणी का ज्ञान सहसा दे देना व्यर्थ है, क्योंकि वह उसे सहसा धारण करने में असमर्थ होगा। उसी प्रकार उच्च श्रेणी के शिष्य या श्रोता को निम्न श्रेणी का उपदेश दें तो उसकी तृप्ति ही न होगी! जैसी योग्यता का चेला होगा और जितनी अधिक उसमें ग्रहण करने की शक्ति होगी, चाहना होगी, उसी के अनुसार उसको गुरु शिक्षा भी देंगे। इसलिये जो योग्य शिष्य अपनी हस्ती मिटा कर दीनता की खाक व प्रेमियों के विरहभाव का स्मरण करके आँसुओं के पानी से नामरूप बीज को सींचते हैं—तब सत्संग के सुरक्षित कोट के भीतर, बाहर, अन्दर, प्रेमियों के संग से भक्ति लता बढ़ने

लगती है। उसमें अनुराग की कोपलें, भाव के रंग बिरंगे फूल एवं सेवारूपी स्वादिष्ट फल भी लगने लगते हैं। श्री गुरु परमेश्वर की कृपा से यह भक्तिलता मायिक ब्रह्माण्डों को पार करती हुई विरज़ा नदी का भी उल्लंघन कर जाती है। अब यहाँ से दो रास्ते फूटते हैं। यदि अपने ही विश्राम, सुख और काम का जागरण हो गया, तब तो यहीं डूब जाता है, परन्तु जिसके मन में उत्कट उत्कंठा जग रही है, और जिनकी भक्तिलता का प्रेमफल पाने के लिये स्वयं प्रियतम भी ललचते-मचलते रहते हैं, उनकी भक्ति बेलि दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ती-बढ़ती अपने इष्टदेव के धाम में पहुँच प्राण प्रियतम के चरण कमल रूप कल्पवृक्ष से लिपटकर नित्य नये रंग के रसमय मधुर फल प्रियतम को चखाती है। वह कैसे हैं? जिनमें गुठली, छिलके और रेशे का नाममात्र भी नहीं है! केवल रस ही रस भरा रहता है। परन्तु यह कार्य संतों की कृपा बिना एवं दिल से दिल मिलाये बगैर हो ही नहीं सकता। संतों के हृदय से प्रवाहित उपदेश-रस के रंग में अपने जीवन को रँग देना, उनकी आँखों के इशारों के ताल पर नृत्य करना एवं संतों के हृदय के प्यार, प्यास, भाव एवं साधना को अपनाना ही दिल से दिल मिलाना कहलाता है। यही भगवत् प्राप्ति का यत्न है। सद्गुरु की कृपा से क्या नहीं हो सकता? वह तो बिन्दु को सिन्धु, तृण को कल्पवृक्ष, नागफनी को चन्दन, लोहे को सोना, मुरदे से जिन्दा, एवं जड़ से चैतन्य बना सकते हैं। यदि जीव सच्चे हृदय से साधना करता हुआ ईश्वर की तरफ चले, तो ईश्वर के पास पहुँचने में उसको हजारों वर्ष लग सकते हैं, और मुरशद (गुरु) की मेहर हो जाय, तो विषय में फँसा हुआ जीव भी बिना किसी साधना के दस वर्ष, दस महीने, दस दिन, दस घड़ी अथवा दस ही पल में ईश्वर से मिल सकता है। यह कब हो सकता है? जब कि साधक श्री गुरुदेव

की ताड़ना को पिता के प्यार से भी अधिक माने—अर्थात् आज्ञा को कभी न तो टाले न भंग करे, और न कभी तर्कवितर्क द्वारा उनको तंग करे। यदि कोई गुरुजनों के वचनों की अवहेलना करे, साधु पुरुषों का तिरस्कार करे, अपने हित की बात कहने में भी जिसे बुरी लगे, अपने हितैषियों को भी जो कोई शत्रु समझे, पूज्यों के लिये भी जो कोई कुवाक्य बोले, तो समझ लेना चाहिए कि उसका विनाश समीप है। मृत्यु के वश में होकर अपना सर्वस्व नष्ट करने के लिए ही मनुष्य ऐसे-ऐसे आचरण करता है। इसके अतिरिक्त जो अपने हित में सदा रत रहते हों, वह यदि हमारे दुर्व्यवहार से दुखी होकर हमें परित्याग कर चले जावें, और हमें उनके जाने पर पश्चाताप न हो, तो निश्चय समझ लेना चाहिए कि हमारा कल्याण नहीं। संसार के सभी मत, मजहब एवं सभी सम्प्रदाय जीव को भगवान के समीप पहुँचाने के निमित्त ही तो बने हैं। उनके बाहरी रूप में चाहे जितना भी भेदभाव हो परन्तु भीतरी वस्तु (भगवत् प्रेम) तथा (भगवत् स्वरूप) में कोई अन्तर नहीं। सबके दिलों में तो ईश्वर ही धड़क रहा है, सबकी साँसों पर ईश्वर ही झूला झूल रहा है, सबकी मनोवृत्तियों के साथ वही नाच रहा है, और सबकी बुद्धि में वही जज बनकर बैठा हुआ है—उसको हिन्दू, मुसलमान, यहूदी, ईसाई की कोई पहिचान नहीं है, वह सब का है, और सब में है। जो सन्त लोग ईश्वर के इस स्वरूप को पहिचान लेते हैं, वह किसी के साथ रागद्वेष की तो चर्चा ही क्या, भेदभाव भी नहीं करते। वे तो सभी की सच्चाई और ईमानदारी का आदर करते हैं, चाहे वह किसी भी धर्म के क्यों न हों!

जो ईश्वर के पास पहुँच चुके हैं, वे समर्थ पुरुष सब एक रूप हैं। सभी सन्त और दरवेश प्रभु के घर से ही तो आते हैं। एक ही परमात्मा के अनेक वेश हैं, और जैसे रंग बिरंगी

गायों का दूध एक ही किस्म का होता है उसी प्रकार आत्मा और परमात्मा भी एक ही हैं दो नहीं ।

सज्जनो ! जैसे एक ही बिजली घर से लाखों तार निकल कर करोड़ों बल्बों को रोशनी देते हैं, कहीं नीले, कहीं पीले, कहीं हरे, कहीं लाल, कहीं सफेद ! इसी प्रकार संसार का अज्ञानान्धकार दूर करने के लिये कहीं किसी रूप में, कहीं किसी स्वरूप में, भिन्न-भिन्न मत और मजहब में, भिन्न-भिन्न रूप में, संत और दरवेश प्रकट होते रहते हैं। और जैसे वायु के सम्बन्ध से पुष्प की सुगंधि नासिका तक पहुँच जाती है, वैसे ही सत्पुरुषों के सम्बन्ध और संसर्ग से निर्मल चित्त अनायास ही ईश्वर तक पहुँच जाते हैं।

ईश्वर के नाम अनन्त हैं, अनन्त रूप हैं, अनन्त भाव हैं। उसे किसी नाम से भी कोई पुकारे तो वह सब की पुकार सुन लेता है। एवं किसी रूप या किसी भाव से उनकी याद करे तो वह सब की मनोकामनाओं को भी पूर्ण कर सकता है। नाम और नामी में कुछ भी भेद नहीं रहता ! देखिये जल एक है, उसे कोई कहता है पानी, तो कोई वाटर, कोई यदि उसे आब कहता है तो कोई एकवा। अगर उसे किसी ने जल कहा तो किसी ने तोय, इसी प्रकार कोई नीर भी कहता है ! वैसे ही भगवान को भी कोई कहता है "गाड" तो कोई "हरी", कोई कहता है राम तो कोई रहीम, कोई कहता है 'ईसू' तो कोई कहता है 'अल्ला'। देखिये ! वस्तु एक ही है केवल नाम में भेद है ! जरा और भी देखिये ! घर का जो मुखिया होता है उसके साथ अनेक लोगों के अनेक प्रकार के सम्बन्ध हुआ करते हैं। अगर वह किसी का बाप है तो किसी का चाचा भी, यदि किसी का मामा है तो किसी का भाई, किसी का ससुर है तो किसी का समधी, किसी का साला है तो किसी

का बहनोई, किसी का गुरु है तो किसी का शिष्य भी होता है। वैसे ही परमात्मा भी एक है, उसकी अनेक लोग अनेक भावों से उपासना करते हैं।

❀ सत्संग ❀

कीर्तन तथा श्री रामनाम की महिमा

सत्संग सुगम एवं उत्तम साधन है। सत्संग में भक्तों के दिव्य नाम, गुण एवं लीला चरित्रों का मधुर वर्णन होता है, जो कि मानव जीवन का सार है। थोड़ा खाकर अधिक चबाने से अधिक स्वाद बढ़ता है। इसलिये जितना भी सत्संग करे उससे दुगुना मनन भी करे, जैसे नींव के बिना महल का टिकना असम्भव है, वैसे ही मनन के बिना सत्संग का टिकना भी मुश्किल है, और जैसे भोजन के एक-एक ग्रास से भूख मिटती हैं, तृप्ति होती है, एवं शरीर का बल भी बढ़ता है, वैसे ही सत्संग की जुगाली करने से विषय की भूख मिटती है, रस की वृद्धि होती है, एवं प्रेम का एक-एक अंग परिपुष्ट होता है।

"धन दारा अरु सम्पदा-पापी हू के घर होय !
सत्संगति अरु हरि कथा-तुलसी दुर्लभ दोय ॥"

संसारी भोग विषय की वस्तुयें तो कूकर शूकर सभी योनियों में प्राप्त हो सकती हैं, किन्तु सत्संगति (भगवत्चर्चा) यह तो मनुष्य-योनि में ही सम्भव है। जिसे एक बार भी सत्संगति

का रस मिल गया, उसे तो फिर मुक्ति की इच्छा भी नहीं रह जाती। साधुसमागम एवं सत्संग तो परम भाग्यशाली पुरुषों को ही प्राप्त होता है। यदि हम संसारी कार्यों में से कुछ समय निकाल कर भगवान के सम्मुख रोवें उनके मधुर नामों को आर्त होकर पुकारें तो फिर हमारे जीवन में आनन्द की हिलोरें उठने लगें। इसलिए "जब तलक है जिन्दगी फुरसत न होगी काम से, कुछ समय थोड़ा बचाकर प्रेम कर लो "श्री सीताराम से।" यह संसारी कार्य कभी समाप्त नहीं होंगे! एक के बाद दूसरा, दूसरे के बाद तीसरा कार्य लगा ही रहेगा, इसलिए कुछ समय नियमित रूप से देना चाहिए। जब कि वे व्यर्थ कार्यों के लिए समय निकाल लेते हैं, तो बड़े आश्चर्य की बात है कि भगवत्चर्चा के लिए उनको समय क्यों नहीं मिलता। देखिये जब आप हाथों से काम करते हैं, तब मुख तो खाली रहता है, मुख से भगवान का नाम उच्चारण करते चलो आप का कल्याण हो जायगा। शास्त्रों में लिखा है कि संसार रूपी सर्प से काटे हुये प्राणी की एकमात्र यही औषधि है कि सभी अवस्थाओं में, सर्व स्थानों में सभी समय भगवान के नामों का कीर्तन करें। यहाँ तक कि पाखाने में और सब बातें बोलना तो निषेध है परन्तु भगवत् नाम लेना वहाँ भी निषेध नहीं है। भगवत् नाम लेने में शुचि अशुचि, पात्र कुपात्र, देश काल आदि का कोई भी नियम लागू नहीं है। जप तो जितना ही शनैः-शनैः किया जाय उतना ही श्रेष्ठ है, परन्तु कीर्तन जितना ही उच्चस्वर में किया जाये उतना ही लाभप्रद है। स्वयं भी अपने कानों को सुनाई दे, और आस पास के जितने भी पशुपक्षी, नरनारी, जड़ चैतन्य सुनेंगे, उन सबका भी कल्याण होगा।

श्री हनुमान जी महाराज की प्रतिज्ञा है कि भगवान के नाम को कोई, कैसे भी, किसी भी देश में, कहीं भी लेगा, तो मैं उसकी

रक्षा करूँगा। जब कि नाम जापकों के सिर पर इतना प्रबल पराक्रमी वरदहस्त है, तब तो सबको निर्भय होकर भगवन् नाम का कीर्तन करना ही चाहिए। दूसरे साधनों में तो विधि-हीन होने से उनका उलटा फल बतलाया है, परन्तु भगवत् नाम से कभी भी किसी अवस्था में हानि नहीं हो सकती! देखिए! नाम में स्वयं सामर्थ्य है। आप किसी भी आदमी का नाम लेकर पुकारें तो वह शीघ्र आप से मिलेगा क्योंकि वह चैतन्य है। सभी वर्णों के लोग श्री सीताराम नाम के प्रताप से संसार बन्धन से सदा के लिए छूट सकते हैं। नाम जप करने वालों की चिन्ता नामी को स्वयं रहती है। देखिये! अजामिल, गज, द्रौपदी आदि की कथा। शब्द का भारी प्रभाव होता है। आप किसी अनजान आदमी को जरा साला तो कह दो! देखिये! उस पर कितना बुरा प्रभाव पड़ेगा। वह अगर क्रोधी हुआ तो आप की भली भाँति पूजा भी कर देगा। जब कि एक साधारण शब्द बिना सम्बन्ध के उच्चारण करने से अपना प्रभाव दिखलाता है, तो जो नाम रस-विग्रह चेतन नित्य चिन्तामणि है, तो क्यों वह अपना प्रभाव नहीं दिखलायेगा?

"प्रायश्चित सब पाप का, श्री सीताराम का नाम है,
तुम उच्चारण भर करो, फिर तो नाम का काम है।"

अनन्त कोटि ब्रह्माण्डनायक मर्यादापुरुषोत्तम भगवान श्री रामचन्द्र महाराज के नाम की महिमा भला दूसरा कोई क्या वर्णन कर सकता है, जब कि स्वयं—

"राम न सकें नाम गुण गाई"!

विपुल वैभव एवं अटूट सम्पत्ति भी किसी के सुख का कारण नहीं हो सकती। अगर ऐसा होता तो बड़े-बड़े राजे महाराजे धन सम्पत्ति पर लात मार कर, उसको ठुकराकर

भगवान् की प्राप्ति के लिये वन में न चले जाते ! सज्जनो ! सुख तो निरन्तर भगवान का नाम लेने से ही मिल सकता है—

"तन पवित्र सेवा किये, धन पवित्र किये दान,
मन पवित्र हरि भजन ते, होत त्रिविधि कल्याण"
"लेने को हरि नाम है, देने को अन्नदान,
तरने को आधीनता, डूबने को अभिमान ।।"
"राम नाम को सुमिर-ले, हँस के भावैं खीम,
उल्टा-सुल्टा ऊपजै, ज्यों खेतन में बीज ।।"

हा! एक जमाना था कि आर्य लोग अपने प्यारे प्रभु श्री रामजी के प्रेम में हमेशा मग्न रहते थे। रामनाम में प्रेम और भक्ति दिखाते हुये श्रद्धा और विश्वास की जंजीर में जकड़े भगवान का गुणगान करते थे । श्रीराम नाम को समस्त जंत्रतंत्र और मंत्रों का सिरताज और मुकुटमणि मानते थे, उनको पूर्ण विश्वास था कि :—

"जबही नाम हृदय धरयो, भयो पाप को नास,
मानो चिनगी अग्नि की, पड़ी पुराने घास ।"

श्रीराम नाम को सबसे श्रेष्ठ और सर्वगुणों का आधारे समझते थे ।

* कुण्डलिया *

हिन्दू होय के न सुने, राम कथा सुख सार,
ताके सिर पै दीजिये, दस हज़ार पैज़ार (जूता) ।
दस हज़ार पैज़ार, मुख पर करखा दीजै,
दे गरदन में हाथ, शहर से बाहर कीजै ।
कहैं गिरिधर कविराय, सुनो हो कुन्दू,
राम कथा ना सुने, ससुर काहे का हिन्दू ।

ऐसे परमकल्याणप्रद् भगवान के मधुर नामों को जो कोई

नहीं भजता वह चौरासी लाख योनियों में भटक-भटक कर हमेशा जन्मता मरता ही रहता है।

"बिन राम कहीं आराम नहीं, इसमें शक और कलाम नहीं।
इस दम का कोई क़याम नहीं, है आज सुबह तो शाम नहीं॥"

इस असार संसार सागर की दुःखद तरंगों में अनादिकाल से भटकते हुये दीन प्राणियों के कल्याण के लिये जहाँ शास्त्रों में अनेक उपाय बताये हैं, वहाँ श्रुतियाँ, स्मृतियाँ तथा स्मृतिकार महात्माओं ने इस कठिन कलिकाल में केवल श्री रामभक्ति एवं श्री रामनाम को ही एकमात्र समस्त जीवों के उद्धार का अन्तिम साधन कहा है।

"बैठत सभा सबही हरि जू की, कौन बड़ो को छोट,
सूरदास पारस के परसे मिटत लोह की खोट।"
"सब कर मत खगनायक एहा, करिय राम पद पंकज नेहा।"

आग का गुण जलाना है, चाहे उसको कोई जाने या न जाने। इसी प्रकार श्री रामनाम का गुण भी पापपुण्य दोनों को जलाना है। जब तक पाप और पुण्य का खाता वेबाक नहीं होता, तब तक प्रभु का दीदार कहाँ ? और उनके दीदार बिना भला परमपद की प्राप्ति कहाँ ?

"धरती बिनु धीरज कौन धरे, माता बिनु आदर कौन करे।
बरषा बिनु सागर कौन भरे, श्री राम बिना दुख कौन हरे।"

भगवान के सभी रूप और सभी नाम प्रभावशाली हैं, उनमें छोटा-बड़ा किसे बताया जाय। पारस का पत्थर जिसके हाथ लग जाता है, तब तो वह काँच की चमक-दमक की तरफ आँख उठाकर भी नहीं देखता, इसलिये!

"नाम हरी का भुला दे प्यारे, कभी भुलाना ना चहिये,
पाकर नर तन बदन रतन को, खाक मिलाना ना चहिये।"

"विद्या पढ़ उपदेश करो - गर धन होये कुछ दान करो,
शरीर में यदि बल है - तो निर्बल का कल्याण करो।"
"चाहो यदि कल्याण जगत में-तो सियवर का ध्यान धरो,
चला गया दसशीश यहाँ से - शान बढ़ाना ना चहिये।

सब शास्त्रों का सार एवं निचोड़ यही है कि भगवत् भजन को ही परम धन समझ कर भगवान से ही स्नेह और प्रेम करे, कुटुम्ब के लोगों में आसक्त न होकर उनसे निर्वाह मात्र ही संसर्ग रखे, और—

"जाके प्रिय न राम वैदेही,
तजिये ताहि कोटि बैरी सम यद्यपि परम सनेही।"

देखिये ! जहाँ से मूत्र उत्पन्न होता है वहाँ से पुत्र भी उत्पन्न होता है। यदि वह अपने अनुकूल है, भगवत्भक्त है, कुलवंश की प्रतिष्ठा बढ़ाने वाला है तब तो वह पुत्र है, नहीं तो मूत्र की भाँति त्यागने योग्य है। ऐसे नास्तिक और अन्यायी पुत्र, मित्र अथवा सम्बन्धी को तो त्याग देना ही धर्म और न्याय है, कारण कि भगवत् विमुख का मुख देखना भी महापाप है।

पाठको ! संसार में बहुत से विषयी लोग बहुत दिन तक जीते हैं, परन्तु उनके जीने से क्या लाभ। दिन हुआ गोरख धन्धे में लग गये, अनेक सुन्दर-सुन्दर पदार्थों को खा पीकर विष्टा तथा मूत्र बना डाला, सुअरनी एवं कुतिया की तरह व्यर्थ बच्चे पैदा कर डाले, जिनका पालन-पोषण करना भी मुश्किल हो गया। इधर तो दिन भर झूँठ मूँठ बेईमानी एवं ठगी से लोगों को खूब लूटा और ठगा, और पेट भरकर रात्रि में पलंग पर लगाई मसहरी और लस्त होकर तान दुपट्टा सो गये। इसी प्रकार बचपन गया, जवानी आई। जवानी गई, बुढ़ापा आया। और अन्त में मर गये। जिस जीवन में साधना नहीं, भजन नहीं, सत्संग नहीं रातदिन पेट भरने की ही चिन्ता सवार है, और जब

देखो विषयवासनाओं की ही चर्चा चल रही है तो ऐसे लोग चाहे जन्मते ही मर जावें, चाहे १०० वर्ष जी कर मरें उनसे लाभ ही क्या ? उन्हें तो हरदम आहार निद्रा और मैथुन का ही भूत सवार रहेगा !

"कोटि कल्प को काल हूँ भक्ति बिना बेकार है,
जो क्षण हरि हृदय में सो ही समय सुखसार है ।"

इसलिये जिनका समय भगवत् भजन में व्यतीत हुआ उन्हीं की आयु सार्थक समझो, और जिन्होंने मनुष्य तन का यथार्थ कर्त्तव्य समझकर, विषय भोगों को नाशवान, क्षणभंगुर एवं संसार में फँसाने वाला जानकर उनको परित्याग कर, श्री सीताराम जी के कोमल चरणारविन्दों में ही चित्त को लगा लिया हो, तो ऐसे बड़भागियों के लिये केवल एक मुहूर्त का जीवन भी बहुत है। उसी में वह अपना कल्याण कर सकते हैं और जो भगवान से विमुख हुये उन्हीं की दुर्दशा होती है।

"जीवन श्री सीताराम बिना जीवन न कहावै,
भक्ति हीन नर मृतक सरिस होय काल वितावै ।"

भगवत् कृपा—

वह मनुष्य एवं संतजन धन्य हैं, जिनके मुख से मृत्युकाल में मनमोहन प्यारे श्री सीताराम जू के सुमधुर नामों का उच्चारण हो जाता है। फिर उनके भाग्य का तो कहना ही क्या जिन्हें अन्तकाल में उन श्याम गौर श्री युगुल सरकार की हृदयमानस में बाँकी झाँकी हो जाती है। अनन्तकाल तक जप, तप, पूजा, पाठ, एवं ज्ञानध्यान इत्यादि करने का एकमात्र उद्देश्य यही है कि अन्त समय भगवान के सुमधुर नामों का इस जिह्वा से उच्चारण हो जाय। और मन में उनकी काले-काले घुँघराले, चिकने बालों वाली विश्वमोहनी झाँकी एक बार समा जाय तो

हमारे सभी साधन एवं जीवन भी सफल हो जायँ। योगीजन जिनके एक बार के दर्शनों के निमित्त सहस्रों युग तपश्चर्या करते हैं, अन्त समय में जिनके नाम का संकीर्तन करने से और मन में भी भावमयी जिनकी छटा आने से सभी कर्मबन्धनों से छूट जाते हैं, और ज्ञानी, ध्यानी, नीति विशारद, भक्ति तत्व के ज्ञाता, इस भूमण्डल में विचर-विचर कर उस प्रभु का जगत-मंगल नाम उच्चारण करते हैं, वही भगवान अपने भक्तों के सम्मुख स्वयं साक्षात साकार रूप से इन चर्मचक्षुओं के सामने ही उपस्थित हो जाया करते हैं। यह सौभाग्य किसी साधन के द्वारा साध्य नहीं हो सकता, यह तो एक मात्र भगवान की कृपा पर ही निर्भर है।

चिन्ता—

चिन्ता चिता बराबर होती है। इसलिये—

> "चिन्ता ताको कीजिये जो अनहोनी होय।
> यह मारग संसार का "नानक" थिर ना कोय ॥"

संसार के दुःख में डूब जाना व्यवहारी कुसंगी लोगों का काम है। यदि सत्संगी लोग भी अधिक चिन्तित एवं व्याकुल होने लगें तो फिर सत्संग से लाभ ही क्या हुआ? मनुष्य को चिन्ता तो केवल परमपिता परमेश्वर की प्राप्ति करने के लिये करना ही उचित है। कोई अतिथि अथवा अभ्यागत जिसके घर द्वार से खाली लौट जाय तब चिन्ता करनी चाहिये, कारण कि इनका घर से खाली हाथ लौट जाना भारी अनर्थ एवं अमंगल का सूचक होता है। हर समय भगवान के दरबार में विनय प्रार्थना करने से हृदय की समस्त व्यथा चिन्ता एवं दुःखदर्द पानी बनकर आँखों से बह-बह कर निकल जाता है। चिन्ता चिता को हृदय में कभी जगह न देनी चाहिये। संतों का

सत्संग उदारता, भगवतभजन, भगवान के सामने प्रार्थना एवं अपराधों की क्षमा करने कराने से चिन्ता कोसों दूर भाग जाती है। डर व भय यदि रक्खे तो भगवान का ही डर रक्खे, इस प्रकार का डर मनुष्य को संसार में निडर ही बना देता है। जो भगवान से डरेगा वह कपट अन्याय एवं असत्य को आचरण में नहीं लायेगा। धर्म से डिगने का भय एवं परलोक के बिगड़ने का भय, यही भय ऐसे हैं जो कि मनुष्य को संसार यात्रा में अभय बनाते हैं। भगवत् कृपा से ही मनुष्य अभय पद की प्राप्ति करके यथार्थ सुख और शान्ति के जीवन को व्यतीत कर सकता है।

नियम का पालन—

नियम का पालन करना भी आवश्यक है। नित्य नियम का पालन न करना मानो प्रेमदेव का अनादर ही करना है। कारण कि नियम के समय प्रेमदेव पदार्पण करते हैं और जब अपने प्रिय को किसी दूसरे व्यवहार में लगा देखते हैं तो प्रभु निराश होकर लौट जाते हैं तथा श्री हनूमान जी महाराज जो भगवत् कथा सुनने के रसिक हैं उनको भी भारी खेद होता है। इसलिये भूल कर भी नियम से कभी न चूके—

> "राम कथा जहँ होत है, तहँ-तहँ पवनकुमार,
> सिर पर अँजुली धर सुनत, बहत नैन जल धार।"

(3) श्री महाप्रसाद महात्म्य—

अहा! श्री महाप्रसाद के माहात्म्य का भी क्या कहना! हरी-हरी कोमल तुलसी मंजरी सहित शुद्धता से बनाई हुई रसोई में जब डालकर भगवान के अर्पण की जाय तो उसी प्रसाद को महाप्रसाद कहते हैं और जब उस महाप्रसाद को संत एवं भगवत भक्त पा लें, उनके पाने के बाद जो शेष रह जाय उसको महा-

महाप्रसाद कहते हैं। उस प्रसाद को उनकी ही आज्ञा से श्रद्धा भक्ति के सहित पाने से सभी प्रकार के पापों का नाश होकर अन्तःकरण की मलीनता भी दूर होकर हृदय शुद्ध बन जाता है।

प्रारब्ध—

यह जीव अपने कर्मानुसार ऊँच नीच योनियों में आता है, प्रारब्ध का यही चक्कर है, लीलाधारी की यही लीला एवं खिलाड़ी का यही खेल है। मायापति की यही माया है, यही कर्म चकर संसार को चला रहा है।

यह पुण्य पाप ही अनेक योनियों में जाव को भरमाते रहते हैं। कायिक, वाचिक एवं मानसिक यह तीन प्रकार के पाप पुण्य हुआ करते हैं। यह शारीरिक दुःख-सुख दोनों प्रारब्धानुसार ही आते जाते रहते हैं। जिस योनि में मनुष्य जाता है, न चाहना करने पर भी प्रारब्ध उनके साथ ही साथ रहती है, और उसी के अनुसार सुख-दुःख भी होते हैं। उसकी चिन्ता करो तो मिलेंगे और न चिन्ता करने पर भी जरूर मिलेंगे। इसलिए हर एक मनुष्य को सदा भगवान के भरोसे पर निश्चिन्त रहना चाहिए, और संसार में किसी मनुष्य से कोई आशा न रखकर भगवान का भजन करना चाहिए। जो लोग भगवान के भरोसे पर ही रहते हैं और जिन्होंने अपना शरीर मन और प्राण प्रभु के पादपद्मों में अर्पण कर दिया है, प्रभु उनके किसी भी मनोरथ को विफल न करते हुये अवश्य उनके मन की समस्त इच्छाओं को पूरा करते हैं। जिसको प्रभु का विश्वास है, वह सुखी रहता है और जब विश्वास को खो कर अधीर हो बैठता है तभी दुख पाता है। और जिसका यह अटल निश्चय बना रहता है कि सर्वान्तर्यामी भगवान किसी न

किसी रूप में आकर मेरे मनोरथ को अवश्य पूर्ण करेंगे, तब तो न जाने कैसे उनके समस्त कार्य किसी को निमित्त बना कर पूर्ण हो जाते हैं। एक बार नहीं सकड़ों बार का यह अनुभव है। "पहले बनी प्रारब्ध पीछे बना शरीर"। विधाता ने जो कुछ भी हमारे भाग्य में लिख दिया है, वह चाहे कहीं जा बैठो अवश्य मिल ही जायगा। और इससे अधिक स्वर्ण की खान में भी जाने पर हाथ न आयेगा। इसलिये—

"ग़मे रोज़ी मखुर बरहम मज़न, औराके दफ़तर रा,
कि पेशअज़तिफ्ल ऐज़द पुर कुनद पिसताने मादर रा"।

अर्थात् जब बालक पैदा होने से पहले माँ के स्तन में भगवान दूध दे देता है, तो तू रोजी के ग़म में कर्तव्य को न भूल।

संसारी भोग भी तो प्रारब्धानुसार ही होते हैं, इसलिये साधु पुरुष इनके आने पर अत्यन्त हर्ष नहीं मानते, और न चले जाने पर विषाद। वह तो यह समझते हैं, जो हमारे भाग्य का होगा, जो हमारी प्रारब्ध में होगा उसे तो कोई ले नहीं सकता, मेट नहीं सकता, त्रिकाल में भी वह दूसरे का हो नहीं सकता, और जो भोग हमारे प्रारब्ध का नहीं है, वह किसी भी प्रयत्न से किसी भी उपाय से किसी भी पुरुषार्थ से हमें मिल नहीं सकता। मनुष्य के जन्म-जन्मान्तरों के संचित दुष्कर्म भगवान के सम्मुख होते ही भस्म हो जाते हैं।

क्रियमाण कर्म—

मनुष्य जो पाप करते हैं वह भजन करने से इस तरह से खतम हो जाते हैं कि उसकी निन्दा करने वाला तो उसके पापों को और उसकी प्रशंसा करने वाला उसके पुण्यों को अपने माथे पर ले लेता है। तब तो उसका खाता बेबाक अर्थात् चुकता हो जाता है और वह मनुष्य भजन के प्रताप से निर्लेप होकर जल में कमल के पत्ते की तरह अपना जीवन आनन्दपूर्वक व्यतीत करने लगता है।

प्रारब्ध भोग—

प्रारब्ध भोग उसको कहते हैं कि जीव के संचित कर्मों में से कुछ पुण्य-पाप ले कर कर्मों के भोगने के लिये मनुष्य का जन्म हुआ करता है। अच्छे बुरे कर्म जरूर भोगने ही पड़ते हैं। अच्छे का फल सुख और बुरे कर्मों का फल दुःख मिलता है। यदि कोई हमको सुख देता है तो वह हमारा हितकारी है और दुःख देता है तो हमारा शत्रु है, यह कभी न समझना चाहिये। क्योंकि सुख-दुख के देने वाला कोई नहीं! सुख-दुख तो अपने-अपने कर्मों का भोग है।

"कोउ न कोहु सुख-दुख कर दाता, निज कृत कर्म भोग सब भ्राता।"

काल की महिमा—

धर्म करने से सुख और पाप करने से दुःख ही मिला करता है। यदि किसी को धर्म करने से भी दुख मिले तो इसमें भी किसी को दोष न देकर भगवान की कृपा ही समझे। भगवत् लीला, काल की महिमा एवं प्रारब्ध कर्मों का भोग बड़ा ही प्रबल होता है जोकि टल नहीं सकता। देखिये! पाण्डवों के पास यद्यपि धर्म, कलाकौशल, बल, सहायक, एवं समुचित साधन सामग्री उपस्थित थीं, जिनके सहायक सम्पूर्ण संसार के स्वामी सर्वसमर्थ सच्चिदानन्द स्वरूप साक्षात श्यामसुन्दर ही थे। उनसे बढ़ कर सहायक भला और कौन हो सकता था? यह उनके केवल सहायक ही नहीं थे, सखा-स्वामी-सुहृद-सेवक सभी कुछ थे। देखिये! इतना सब होने पर भी पाण्डवों को दुख भोगने पड़े, मुट्ठी भर अन्न की आशा से कृपण गृहस्थियों के द्वार-द्वार पर खड़े होकर याचना करनी पड़ी, बारह वर्ष तक वन-वन भटकते फिरे क्लेशों को सहते हुये जंगलों में घूमते रहे। भाइयो! इसी से हमको इस परिणाम पर पहुँचना पड़ता है, कि काल

की गति दुर्निवार है । यह काल इन भगवान से कोई दूसरे देव हों ऐसी बात नहीं । यही काल स्वरूप भगवान कब किससे क्या कौतुक कराते हैं इसको उनकी कृपा बिना कोई जान ही नहीं सकता । इसलिए दुखों और कष्टों से घबड़ाना नहीं चाहिए, किन्तु इसको भी भगवत की कृपा ही मान कर सहना चाहिए । कारण कि जैसे सोना तपाया जाने पर और भी खरा हो जाता है, वैसे ही कष्टों से तपा-तपा कर उनका भक्तिरूपी स्वर्ण भी अधिकाधिक उज्ज्वल, निर्मल एवं महाप्रभाश्रेणी का होने लगता है । इसलिए भगवदानुरागी धीरजवान पुरुष महान कष्टों के पड़ने पर भी धीरता का परित्याग नहीं करते, बल्कि भगवान के अनन्य प्रेमी रसिकजन तो सदा भगवान से सुख की चाहना न करते हुये दुख एवं विपत्ति की ही याचना किया करते हैं । वह तो कहते हैं कि हे भगवन् ! मुझे शक्ति दो कि मेरे नेत्र आप की युगुल माधुरी का निरन्तर पान करते रहें, वाणी आप के गुणानवाद में लगी रहे, चित्त में आपकी माधुरी मूर्ति बसी रहे, मन आपके ही ध्यान में मग्न रहे ! फिर तो मुझे और चाहिए क्या। मैंने तो सब कुछ पा लिया, अपने मनुष्य जीवन को सफल बनाते हुये शरीर का सम्पूर्ण कर्तव्य कार्य भी कर लिया । कृपया अपने श्री चरणारविन्दों में मुझे सदा के लिए आसरा देते हुये निरन्तर अपनी चरण-सेवा में रखलें, और जहाँ तक हो सके मुझे विपत्ति एवं दुख ही दुख दें, कारण कि इन्हीं विपत्तियों के द्वारा ही आपके शुभ दर्शन होते हैं, सुख में भला आपकी याद कब आती है ? इस लिए मैं इन अनित्य क्षणभंगुर तुच्छ नाशवान सुखों को लेकर क्या करूं । भगवन् ! जो आप से मुझे पृथक करदें । प्यारे प्रीतम ! विपत्तियों ने ही तो मुझे आप की शरण में जाना सिखाया, जब कि सुखों ने आपसे विमुख बनाकर प्रथक कर डाला । जो सम्पत्ति

एवं सुख आपके श्री चरणों से दूर करे, आप की भक्ति तथा चरण सेवा छुड़ावे, आप से प्रथक करावें वही तो मेरे लिये घोर विपत्ति है। इसलिए ऐसे—

"सुख के सिर पर सिल पड़े जो तुमको बिसराय,
बलिहारी वा दुख की तव चरणन में लाय"।

प्रत्येक कार्य में कारण छिपा रहता है—कारण से ही कार्य प्रकट होता है। किसी बीज का बोना कारण है तो उससे पेड़ उत्पन्न हो कर फल फूल इत्यादि का मिलना यही कार्य हुआ। इसी प्रकार पाप पुण्य बीज हैं, और सुख-दुख उसके फल हैं। जो कि सभी को भोगने ही पड़ते हैं। कारण के बिना कोई कार्य होता ही नहीं, इसलिए प्रत्येक कार्य का कारण सोचने से मनुष्य की सभी शंकायें दूर हो सकती हैं।

यह जीव अच्छा बुरा जो कुछ भी कार्य करता है सब भगवान की प्रेरणा से ही करता है। संसार में ज्ञानी अज्ञानी सब प्रभु प्रेरित होकर ही कार्य कर रहे हैं। अन्तर केवल इतना है कि ज्ञानी तो इस रहस्य को समझता है, और अज्ञानी अहंकार के वशीभूत होकर अपने को ही कर्ता मान बैठता है। अज्ञानीजनों को इस बहुरूपनी माया ने ही ठग लिया है। जब अकर्ता होकर भी अपने को कर्ता मान लेता है तभी तो उसे दुखों का भी भागी बनना पड़ता है। देखा! माया के पाश में बँध कर जीव कैसा भूल जाता है। मायापति भगवान की मोहनी माया का प्रभाव बड़ा अद्भुत होता है। वह जिससे जब जो कुछ कराना चाहते हैं तब उसकी वैसी बुद्धि भी बना देते हैं। इसी का नाम है माया का चक्कर। ज़रा देखिए तो श्री रामजी एवं रावण में कितना अन्तर है जितना सिंह और सियार में, समुद्र और नाले में अमृत और कांजी में, सोने और लोहे में, चन्दन और कीचड़ में

हाथी एवं बिलार में, गरुड़ तथा कौवे में, हंस एवं गीध में। परन्तु रावण ने अपने घमण्ड में व धन के मद और जवानी की मस्ती में चूर होकर भगवान श्री रामजी महाराज को कुछ भी नहीं समझा। माया के फन्दे में फँस जाने के कारण ही तो "एक समय जिस रावण के हाजिर त्रिलोक रहे, एक समय दसों सीस कटे फिरे रण में"। इसलिये माया को छोड़ कर मायापति मनमोहन प्यारे श्री सीताराम जी से ही पहिचान करो, उन्हीं से प्रेम करो, उन्हीं के गुणों का गान करो। फिर माया तो अपने प्यारे की दासी ठहरी, वह लजाती हुई भाग जायगी। तब तुम माया के परदे को फाड़कर भगवान की गोदी में स्थान पा जाओगे। उस समय शोक मोह तो काफूर हो जायँगे। इधर जरा मरण के चक्कर में फँसने से भी छूट जाओगे और भक्ति-रूपी आनन्द के सागर में पड़े-पड़े अमृत का पान करते हुये सदा सच्चे सुख का अनुभव भी करते रहोगे।

निष्काम कर्म—किसी के द्वारा मान प्राप्त होने पर फूलो मत, और अपमानित होने पर अपने आपको भूलो मत! संसारी लोकलाज को तिलाञ्जलि देने से ही भगवान में प्रेम हो सकता है। जिस प्रकार श्री गंगाजी सर्वदा पापी प्राणियों के पापों को धोती रहती हैं, उसी प्रकार सन्तों के सत्सङ्ग से सभी प्रकार के सन्ताप एवं दुःखदर्द भी दूर हो जाते हैं। यदि सन्तजन इस धरा धाम पर विचरण करके हम जैसे संशयग्रस्त जीवों के संशयों का चूर्ण न करते तो यह सभी प्राणी सदा संशय सागर में डूबते हुये तड़पते ही रहते। याद रक्खो! पाप कर्म से दुःख उठाना पड़ता है, जब कि पुण्य कर्मों से सुख की प्राप्ति होती है। इसलिये जैसे पापकर्म बन्धन हैं उसी तरह पुण्य कर्म भी बन्धन ही समझो। एक अगर मूँज की रस्सी है तो दूसरी रेशम की।

मनुष्य बँधता दोनों से ही रहेगा। बन्धन में अन्तर नहीं है। इसलिये मुक्ति पाने की इच्छा करने वालों को सभी प्रकार के कर्मों का त्याग भी करना पड़ेगा। सब कर्मों को करते समय उन्हें भगवत् सेवा समझे और प्रत्येक कार्य करके "श्री सीतारामचन्द्रार्पण मस्तु" कह दिया करें। अर्थात् यह कर्म श्रीसीताराम जी के अर्पण है, इस कर्म के करने से आप प्रसन्न हों, यह कर्म आपके ही निमित्त है, मैं न इसका कर्ता हूँ और न भोक्ता! ऐसा करने से वह कर्म निष्फल हो जाता है, भगवान के समर्पण होने से निर्जीव बन जाता है। मतलब यह है कि वह भुन जाता है। जैसे उर्वरा भूमि में पानी पाकर पड़ा हुआ बीज जरूर ही उग आवेगा, किन्तु आप उसी बीज को अगर भूवर में भून डालें तो फिर कितना भी पानी दें, खाद डालें वह कभी उगने का नहीं। इसी प्रकार निष्कामकर्म भगवत् प्रसन्नता के लिये किया गया श्री रामप्रेम एवं भक्ति को ही उत्पन्न करेगा। इसलिये भगवान के प्रेमीजन तो अपने समस्त कर्मों को भगवान के ही अर्पण कर भगवान को प्राप्त होते हैं और जब तक संसार में रहते हैं तब तक समस्त चिन्ता और शोक को त्याग मस्त होकर श्री राम गुण का गान करते हुये स्वच्छन्द होकर बिचरा करते हैं। अहा! ऐसे पुरुष धन्य हैं, उनका वैराग्य ज्ञान एवं भगवत प्रेम सराहनीय है। यदि जीवन हो तो ऐसा ही हो। सन्तजन सबसे प्रथम विषयों में बार-बार दुःख को देखकर उससे मन को हटाते हैं और भगवान में पूर्ण सुख समझ कर उनमें मन लगाने का प्रयत्न करते हैं। यही वैराग्य और अभ्यास है। वैराग्य के बढ़ने से भगवान में प्रेम बढ़ता है और जिस समय भगवान का कुछ असली आनन्द प्राप्त होता है तब तो लोक और परलोक के सभी भोग पदार्थ फीके मालूम पड़ने लगते हैं। मन को अधर्म से हटाना और धर्म में लगाना ही वैराग्य है, ऐसे सच्चे वैराग्य से ही चित्त की वृत्तियों

का निरोध होता है। जिसको भगवत से राग होता है उसी को विषयों से भी वैराग्य होता है। जिज्ञासु को कभी दु:ख से दु:खी होकर अपनी मुसीबत का हाल किसी से न कहना चाहिये, क्योंकि इस से वैराग्य हल्का होता है। "आपत्ति में एक-एक से अहवाल कहना मुसीबत से यह है मुसीबत ज्यादा।"

भगवत् के नाम और कीर्तन का फल यह है कि भूत, भविष्य और वर्तमान में भी जो पाप बन गये हों, भगवत् कीर्तन रूपी आग उन्हें जलाकर भस्म कर देती है, और कलियुग के समस्त दोष निवृत्त हो जाते हैं। जिस प्रकार सिंह को देखकर मृग भाग जाता है उसी प्रकार भगवान का नाम, कीर्तन सुन कर मनुष्य के समस्त पाप ताप भी भाग जाते हैं। देखिये! नामी से नाम बड़ा होता है। श्री कुम्भज ऋषि जी नाम के बल से समुद्र सोख गये, नल नील ने नाम के ही प्रताप से पुल बाँधा एवं श्री हनुमान जी श्री राम नाम के प्रताप से ही समुद्र फाँद गये।

सज्जनो! संसार से मुक्त होने का उपाय केवल भगवत्नाम उच्चारण ही है। संसारी लोग, पदार्थों को देखने के लिये सूरज से प्रकाश लेते हैं, और जब सूरज नहीं रहता तब चन्द्रमा की चाँदनी से काम चलाते हैं। उसके अभाव में अग्नि से काम लेते हैं। और जहाँ ये तीनों न हों तो वहाँ शब्द प्रकाश से अर्थात् आवाज से ही काम लिया जाता है। जैसे "अरे तू इधर आ, मैं इधर खड़ा हूं।" बस! इसी तरह समझ लो कि परमात्मा सूरज, चन्द्र, और अग्नि से दिखाई नहीं देता किन्तु उसकी प्राप्ति का उपाय एक शब्द ज्योति ही है। इसलिये परमात्मा श्री सीताराम जी के नाम को एक-एक श्वाँस में आवाज से पुकारो (उनका नाम उच्चारण करो) तब देखो कि प्रभु आप की आवाज को कितनी जल्दी सुनते हैं, यदि आपको सचमुच अपने हृदय मन्दिर में

भगवान को नचाना है तो गोपियों की तरह प्रेम दिखलाओ, आपकी तो बात ही क्या है। देखिये !—

छन्द :—

गज के पुकारते ही ग्राह से बचाया था,
और द्रौपदी की विनय पर वस्त्र बन आया था।
अजामिल पापी को पुत्र के पुकारने पर,
"नारायण" इस नाम से ही नर्क से छुड़ाया था।
प्रहलाद के पुकारने पर जल्दी श्री राम प्यारा,
खंभ तोड़-फोड़ कर "नरसिंह" बन आया था।

इसलिये श्री राम नाम रूपी अमृत का पान करो तब अमर हो जाओगे। देखिये ! अमृत समुद्र में होता है यह ग़लत है। यदि समुद्र में अमृत होता तो समुद्र खारी क्यों होता ? और चन्द्रमा में होता तो चन्द्रमा का क्षय क्यों होता ? स्त्री के मुख में अमृत होता तो उसका पति पीकर अमर हो जाता, उसकी मृत्यु क्यों होती ? अगर सर्पों के फन में अमृत होता तो उनके विष क्यों होता ? और यदि स्वर्ग में अमृत होता तो वहाँ अल्पायु क्यों होती ? कारण कि पुण्य पूरे होने पर फिर मृत्युलोक में आना ही पड़ता है। सज्जनो ! सच्चा अमृत तो श्री राम नाम में तथा भक्तों के कंठ में ही रहता है, यदि अमर बनना चाहते हो तो इस को पी लो। जिसने अमृत पी लिया, उसे फिर संसारी वस्तुओं से क्या मतलब ? जिसने मिश्री का स्वाद चख लिया, तब उसे गुड़ का शीरा कब अच्छा लगेगा और जिस किसी ने गुलाब, चम्पा, जुही, चमेली आदि की सुन्दर सुगन्धित फूलों की मालायें पहिन लीं फिर उन्हें कुरूप काग़ज़ के फूलों की मालायें कैसे भा सकती हैं ? पुरुषार्थ करना जीव का धर्म एवं कर्तव्य है। जब जीव पुरुषार्थहीन बन जाता है तब भगवान किसी न किसी रूप में उसकी रक्षा जरूर करते हैं।

दानधर्म

सज्जनो ! संसार में रहकर जो आप लोग दान धर्म कर रहे हैं यह तो आपका स्वाभाविक कर्तव्य है इसे करना ही चाहिये। कर्तव्य करने पर उतना पुण्य नहीं होता जितना न करने पर पाप लगता है। और आप लोगों को जो यह अभिमान हो जाता है कि हम बड़े उदार और दानी हैं, सच तो यह है कि न तो कोई देने वाले हैं और न कोई लेने वाला ही है। यह तो उस प्रभु की लीला है। और उस लीला क्षेत्र के आप भी एक कर्मचारी हैं। कर्तव्य और भावना के अनुसार वह प्रभु सब को नचा रहे हैं। प्रभु ने अगर आपको अन्नदान करने के कार्य में नियुक्त किया है तो वही करना होगा। इच्छा न होने पर भी करना होगा। इधर जो आपका अन्न ग्रहण करता है अगर वह सोचे कि मैंने अपने कला-कौशल एवं बुद्धिमत्ता से यह वस्तु प्राप्त की है तो नितान्त उसकी भूल है। तुम ग्रहण करने वाले कौन ? भगवान ही तुम्हारे हमारे पालक-पोषक एवं उद्धारक हैं। जो कुछ उन्होंने कर्मानुसार उसके भाग्य में लिख दिया है वही मिलता है। तब तुम दिन-रात उस प्यारे प्रभु का भजन, पूजन, चिन्तवन छोड़ कर उदर पोषण में क्यों निमग्न रहते हो ? :—

"ग़म रिज्क का खा रहा क्यों अरे ग़ाफ़िल,
देता है जो सब को क्या वह न देगा तुझको।"
"कर्म से मिलता है सब, है कर्म की महिमा अपार,
कोई कुछ देता है या लेता है, सब कर्मानुसार।"